अखिल भारत ग्राम उद्योग संघ

तेल घानी

लेखक

झवेरभाई पु. पटेल

अ० भा० ग्रा० उ० संघ, वर्धा



म ग न वा डी

वर्धा

प्रथम संस्करण १९३९
द्वितीय संस्करण १९४१
तृतीय संस्करण १९४२
चतुर्थ संस्करण १९४७

यह किताब हाथके बने कागज पर छपी है

मूल्य—३) रु०

प्रकाशक—
जे सी कुमारप्पा
मत्री, अ भा ग्रा उ सघ, मगनवाडी वर्धा

मुद्रक—
हिंदुस्तान टाइम्स प्रेस, नई दिल्ली

४-४८-१०००]

प्राक्कथन

तेलघानी किताब का तीसरा सँस्करण निकालना आवश्यक हुआ यह एक संतोष की बात है। पहले संस्करण के बाद उसकी पूर्ति प्रकाशित की गई थी जिसमें घानी की रचना के अधिक प्रयोग के परिणाम तथा बढ़इयों को घानी बनाने या उसकी मरम्मत करने के लिये मार्गदर्शन मिले इस तरीके से तफ़शीलवार सूचनाएँ दी गई थीं। दूसरे संस्करण में घानी की रचना ज्यों की त्यों रखकर ग्राम उद्योग पत्रिका में प्रकाशित हुए कुछ लेखों का समावेश किया गया था। इस तीसरे संस्करण में आज तक के घानी की रचना के प्रयोग के परिणाम तथा इस उद्योग के अर्थशास्त्र के अध्ययन का समावेश करके मूल किताब तथा उसकी पूर्ति को इकट्ठा कर दिया गया है।

सीमेन्ट घानी की ओखली से सम्बधित परिशिष्ट अ श्री भारतनद की सहायता से तैयार किया है। परिशिष्ट इ एच बी टेकनॉलॉजिकल इस्टीट्युट, कानपूर, के श्री डी व्हाय आथवले ने तैयार किया है। परिशिष्ट ई श्री जे सी कुमारप्पा लिखित 'मगनदीप' नामक पुस्तिका से उद्धृत किया है। परिशिष्ट उ तथा किताब के आखरी प्रकरण का 'तेल को सडने से कैसे बचाना' वाला हिस्सा हमारे रसायनज्ञों की सहायता से लिखा है। और घानी के बैल की खुराक तथा देखभाल का हिस्सा श्री व्हाय एम पारनेरकरने तैयार किया है।

इस किताब की उपयुक्तता बढाने की दृष्टि से अपना हाथ बटाने के लिये मैं इन महाशयों का कृतज्ञ हूँ।

मगनवाडी,
वर्धा
९ अगस्त १९४३

झवेरभाई पटेल

तीसरे-संस्करण की प्रस्तावना

चू कि प्रतिस्पर्धा और मुनाफा के तत्त्व पर अधिष्ठित अर्थशास्त्र चंद पूँजीपतियों के ही हित के लिये रचा गया है न कि आम जनता के हित के लिये, इसलिये, अपने तँत्र में विज्ञान की बहुतसी सहायता लेते रहने पर भी उसे अपनी हस्ती को कायम रखने के लिये तो बहुत करके प्रचार पर ही निर्भर रहना पडता है। उससे आम-जनता का भी फायदा होता है ऐसी मान्यता पैदा करने के लिये अर्थशास्त्र के गौरवयुक्त बुरके के नीचे कई किस्मके अर्धसत्य उसे लोगोंने गले में उतारने पडते हैं। विद्यार्थी जब कच्ची उम्रके रहते हैं तब उनके भोले, नि:शंक और नवीनताग्राहक दिमागों में ऐसा भूठा प्रचार भरा जाता है जो अक्सर अंतिम सत्य के तौर पर मान लिया जाता है। उनके कच्चे दिमागों में इस तरह बने हुए पूर्वग्रहों को जब वे बडा उम्रके होते हैं तब निकाल भगाना बडी टेढी खीर बन बैठती है।

हमको इस तरह की बहुतसी बातें कही जाती हैं कि वर्तमान युग यन्त्रयुग है, केवल यन्त्रों के बूते पर ही बहुत बडे पैमाने पर उत्पत्ति की जा सकती है, जिससे जीवनयात्रा सुख से हो सकती है, ऊँचे दर्जे की और उत्कृष्ट चीज केवल यन्त्रों से ही बन सकती है, कार्यक्षमता यन्त्रोत्पादन का ही उपमान है, इत्यादि इत्यादि। संक्षेप में उनके कहने का सार यह है कि यन्त्र और सभ्यता तथा विकास ये समानार्थी शब्द हैं। पश्चिम में कम से कम कुछ बडे पैमाने वाले व्यवसायीयोंने उपर्युक्त प्रचार से अपनी पाँचों अंगुलिया घी में कर ली हैं, पर हिंदुस्तान में इस किस्म के प्रचार से हीनता की भावना निर्माण हुइ है और यह विदेशी चीजों की खपत की सुरक्षित मंडी बन गया है। परिणामत यहाँ बेकारी, दारिद्य और कष्ट का दौर दौरा है।

अखिल भारत ग्राम उद्योग संघ का मानवी बुद्धि की कार्यक्षमता में और तमाम मानवी जरूरियातों को ठीक ठीक संतोषपूर्वक पूरी करने की उसकी कुवत में अटल विश्वास है। इसलिये उसने पूर्वग्रहदूषित कल्पनाओं को निकाल भगाने में और तद्द्वारा सत्य और अहिंसा में अपनी निष्ठा सिद्ध

करने में और मौजूदा मानवी जरूरियात पूरी करने में यह उद्योग पूर्ण कार्यक्षम और पर्याप्त नहीं इस भ्रमपूर्ण धारणा का खंडन करने में कोई बात उठा नहीं रखी है। इस छोटीसी किताब में प्रयोग और संशोधन के बूते पर, ग्राम उद्योगोंके विरुद्ध किये जाने वाले झूठे प्रचार का जवाब दिया गया है। हमारे प्रयत्न बहुत अल्प हैं। हमारे पास पर्याप्त साधन नहीं है और हमारे औजार बिलकुल सीदे सादे रहे यह हमें मान्य है। फिर भी सात साल के छोटे अर्से में हमने कुछ उद्योगों की वास्तविक कार्यक्षमता को प्रकाश में लाकर उनमें बडे पैमाने पर किये जाने वाले मिथ्यागौरवयुक्त व्यवसायों को बिना हिचकिचाहट के और खुलेआम ललकारने की कुवत पैदा कर दी यह कुछ छोटी बात नहीं हुई। ग्राम और ग्रामीण उद्योगों की यह दुर्दशा हुई है तो वह उनमें कोई मूलभूत दोष थे इसलिये नहीं बल्कि उचित संशोधन, मार्गदर्शन और संगठन के अभाव में हुई है। यह सिद्ध करने के लिये श्री झवेरभाई पु पटेल ने इस पुस्तक में जो दलीलें दी हैं वे, ग्राम उद्योगों में का एक प्रधान उद्योग—तेलपेराई— के निस्बत की गई छान बीन के बाद दी हैं। इस सफल निर्णयात्मक प्रयोग को देखकर कई उत्साही और साहसी युवक इस मोहक क्षेत्र में कूद पडेंगे और ग्राम जनता के हित का बीडा उठावेंगे ऐसी हमें आशा है। उद्योगों के प्रति लोगों को विश्वास प्राप्त होने के लिये और उन्हें उठाने के लिये उन्हें प्रवृत्त करने के लिये काफी संशोधन की सख्त जरूरत है।

राजकीय क्षेत्र में सब लोग प्रजातन्त्र पद्धति को प्राप्त करने पर तुले हुए हैं, पर वे नहीं समझते कि जबतक ग्राम जनता का दैनिक जीवन सच्चे प्रजातन्त्र में शराबोर नहीं होता तब तक यह ऊपरी स्वाग बेकार ही है। केवल ग्राम उद्योगों को अपनाने से ही सच्चा आर्थिक प्रजातन्त्र सिद्ध होगा और फिर लोगों का, लोगों द्वारा और लोगों के हित का राज्य शुरू होगा। इस हेतु सिध्यर्थ हमें असत्य और झूठे प्रचार का सतत संशोधनों और प्रयोगों द्वारा पर्दाफाश करना होगा। हमें आशा है कि इस पुस्तक के बाद पूर्वग्रदूषित राय, अंध विश्वास और मनोराज्य आदि के लिये कोई गुंजाइश नहीं रहेगी और ठोस कार्य के लिये रास्ता खुल जायगा।

मगनवाडी वर्धा
१५ नवंबर १९४२

जे सी कुमारप्पा

दूसरे संस्करण की प्रस्तावना

इस पुस्तक के प्रथम संस्करण के बाद तेलघानी के उद्योग ने काफी लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है, इसलिये, और समय-समय पर ग्राम उद्योग पत्रिका में दिये गये हमारे लेखों को एकत्र करने के लिये, यह दूसरा संस्करण निकालना नितान्त आवश्यक था। ग्राम उद्योग पत्रिका के इन लेखों पर टिप्पणी लिखते हुए गांधीजी ने "हरिजन" वर्ष ७ के १० वें अंक के २५३ वें पृष्ठ पर इस प्रकार लिखा है—"श्री झवेरभाई ने इस बात की खोज की है कि आखिर मिल का तेल घानी के तेल से सस्ता क्यों पड़ता है? इसके उन्होंने तीन प्रमुख कारण निश्चित किये हैं। जिनमें से मिलों की पूँजी और अल्प समय में तिलहन की आखरी बूँद निचोड़ लेने की मिलोंकी कार्यक्षमता ये दो अनिवार्य हैं पर इनसे मिलनेवाला लाभ मिलमालिक को तेल की खपत के लिये जो कमीशन या दलाली देनी पड़ती है, उसमें पूरा हो जाता है। तीसरा कारण है तेल की मिलावट। सो घानी का तेल भी मिलावट करके यदि बेचा जाय, तो वह मिल के भाव में बेचना पूरा पड़ सकता है। स्वाभाविक तौर पर श्री झवेरभाई तो मिलावट के पक्षपाती नहीं हो सकते, इसलिये उनकी सूचना है कि मिलावट कानून बंद की जाय और मिलों को लाइसेंस लेने पर बाध्य किया जाय।"

"श्री झवेरभाई ने पुरानी देहाती घानियाँ बंद पड़ने के कारण भी ढूँढ निकाले हैं। इनमें से प्रमुख कारण है तेली को तिलहन पूरे वर्ष तक अखंड न मिलते रहना और मौसम के समय देहात की तमाम तिलहन ढो ढोकर बाहर चली जाना। तिलहन संग्रह करने के लिये या शहरों से तिलहन खरीदने के लिये तेली के पास पैसा नहीं होता, इसलिये वह बड़ी तेजी से नामशेष होता जा रहा है। देहातों में आज लाखों घानियाँ बेकार पड़ी हुई हैं, जिससे देश की काफी हानि हो रही है। वास्तव में सरकार का यह कर्तव्य है कि वह तिलहन को उसी स्थान में रोक रखे और

उसे तेलियों की आवश्यकता के अनुसार योग्य भावों में देकर इन घानियों को पुनरुज्जीवित करे। इस प्रकार की सहायता मे सरकार को कोई नुकसान नहीं उठाना पड़ेगा। श्री झवेरभाई की मान्यता है कि को-ऑपरेटिव सोसायटियाँ या पचायतों द्वारा यह सहायता पहुँचाई जा सकती है। काफ़ी समय के अनुभव और सशोधन के बाद श्री झवेरभाई इस निश्चय पर पहुँचे हैं कि तिलहन सग्रह का प्रश्न हल किया जाय तो घानी का तेल मिल के तेल से बख़ूबी स्पर्धा कर सकता है और इस प्रकार देहातियों को आज मिलनेवाले मिलावटी तेल के उपयोग से बचाया जा सकता है। यह बात हमेशा ध्यान में रखनी चाहिये कि देहातियों को जो कुछ स्निग्धता मयस्सर होती है, वह तेल द्वारा ही है। घी तो उसके भाग्य में बदा ही नहीं है।"

तेली के लिये साबुन बनाना या उबाला हुआ (बैल) तेल बनाना ये दो अच्छे सहयोगी उद्योग साबित होंगे, क्योंकि जो तेल खाने के काम में नहीं आ सकता, उसका अथवा तेल का अत्यधिक सग्रह हो जाय तो उसका इन उद्योगों में उपयोग किया जा सकता है। इस दृष्टि से इन विषयों के लिए इस पुस्तक के अत में एक परिशिष्ट जोड़ा गया है।

मगनवाड़ी, वर्धा
३१ मार्च १९४१

जे० सी० कुमारप्पा

पहले संस्करण की प्रस्तावना

आज जिस तरफ़ भी जाइये, सर्वत्र बेकारी को मिटाने की ही समस्या दिखाई पड़ती है। सरकारी और गैर सरकारी लोग तरह तरह की बातें सुझा रहे हैं। दया ही से भोजन का काम नहीं चल सकता। सड़कों और नहरों का बना बनाकर बेकारी दूर करने के प्रयत्न स्थिरता से राष्ट्रीय सम्पत्ति की वृद्धि नहीं कर सकते। अगर हम इस बीमारी को जड़मूल से खोदकर देश को स्वस्थ करना चाहते हैं, तो हमें बीमारी के रास्तों को ही बन्द कर देना चाहिये।

हमारी बेकारी आने का सबसे बड़ा कारण तो यह है कि हम अपनी जरूरत की हर चीज पर विदेशी मुहर देखने के शौकीन हो गये हैं। अपने देश के कच्चे माल को, अपने ही हाथों जरूरी चीजें में बदलने के बजाय, विदेशों को भेजने का अर्थ तो रोजगार धन्धे को भेजने का होता है, और वहां की बनी चीजों को मंगाने का अर्थ है बेकारी को मंगाना। इस तरह हम दोनों ही तरह से बेकारी के पंजे में फँसते जा रहे हैं। अगर यह बात हमारी समझ में आ जाय, तो फिर इस समस्या को हल करने में दिक्कत ही नहीं रह जाती।

विकार खलु परमार्थत अज्ञात्वा अनारम्भो प्रतिकारस्य

हमें अपने कच्चे माल से खुद ही जरूरी चीजें बनानी चाहियें। हमें अपने आसपास की बनी हुई चीजें खरीदनी चाहिये। इन्हीं दो बातों से रोजगारधंधे बढ सकते हैं। यही एक स्वाभाविक और सनातन परिहार है और अखिल भारत ग्राम उद्योग संघ के कार्यक्रम का यही मूलभूत सिद्धान्त है।

विदेशी व्यापार के आँकडों को देखने से पता चलता है कि भारत वर्ष से हर साल करीब १० लाख टन 'तिलहन विदेशों को भेजा जाता है। एक टन तिलहन के पेरने में करीब २८ रुपये की कमाई होती है। इसका

मतलब यह हुआ कि सिर्फ तेल के मामले में ही हम करीब ३ करोड रुपये की सालाना कमाई के रोजगार को अपने हाथों से खो रहे हैं। केवल पेराई की बात ही नहीं, तेल पर तो और भी बहुतसे उद्योग निर्भर रहते हैं। और उन्हीं उद्योगों की बनी हुई चीजें—साबुन, रंग, वार्निश, मशीनों में लगाने के तेल तथा अन्य अनेक चीजें हम दूसरे देशों से खरीद रहे हैं। तिलहन को भेजकर हम इन उद्योगों को भी अपने हाथों से खो रहे हैं। बेकारी को दूर करने का तो यही एकमात्र इलाज है कि हर जगह का कच्चा माल अपने पासपड़ोस में ही जरूरी चीजों में बदल लिया जाय। इसीसे हमें रोजगार मिल सकता है, और यही हमें बेकारी के पंजे से छुड़ा सकता है।

यह पुस्तिका हमारी घानी की कार्यक्षमता बढ़ाने और उसमें तरह तरह के सुधार करने की पिछले कुछ महीनों में की गई कोशिशों पर प्रकाश डालती है।

इसी तरह और कच्चे मालों का भी जरूरी चीजों में बदल कर उनसे मिलनेवाले रोजगार से फायदा उठाया जाय, तो हमारे देश में कारीगर की कोई कमी नहीं रह सकती। इस हालत में हमें बेकारों को कुछ काम देने के लिये सड़कें और नहरें बनाने की जरूरत नहीं रह जायगी।

आशा की जाती है कि यह छोटीसी पुस्तिका अपने ढँग से हमारी सबसे बड़ी समस्या को हल करने में सहायक हो सकेगी।

मगनवाड़ी, वर्धा
८ जनवरी १९३८

जे० सी० कुमारप्पा

घरेलू यन्त्रवाद

क्या तेल की घानी पर भी पुस्तक लिखी जाती होगी ! और मेरे जैसा आमतौर पर धर्म, तत्त्वज्ञान, शिक्षा और संस्कृति पर चर्चा करनेवाला शख्स ऐसी पुस्तक की प्रस्तावना लिखने के लिये तैयार हो जाता है यह भी कैसी अटपटीसी बात मालूम होती है ! क्या सचमुच यह विषय इतने महत्त्व का है या केवल एक की देखासीखी दूसरा भी उसकी महत्ता प्रतिपादन करने पर तुला है ? ऐसे विचार केवल विरोधियों के ही मन म उठते हों सो बात नहीं, पर राष्ट्रीय महासभा की दृष्टि से विचार करने वाले कई भाइयों के मन में भी ये जरूर उठ सकते हैं।

हमारे पास बड़े बड़े कारखाने चलाने के लिये काफी पूंजी नहीं है इसलिये छोटे छोटे गृह-उद्योग चलाये बगैर हमें कोई चारा नहीं है। जब तक स्वराज्य नहीं मिलता और जबतक करोड़ों रुपयों की लूट हम बंद नहीं कर सकते तबतक घर उद्योग ही पनपानें में हमें संतोष मानना चाहिये। इसलिये ग्रामों में जाकर हम लोगों को समझावेंगे कि घानी का तेल ही वे पसंद करें, और घानीवालों से हम कहेंगे "देखो भाई, निरालिश तेल यदि तुम दोगे तो ही लोग तुम्हारा तेल खरीदेंगे और तुम्हारा धंधा पुनरुज्जीवित हो जावेगा।

इतना कहने के बाद क्या और भी कुछ करने की जरूरत रहती है ? अधिक से अधिक हम इतना और कर सकते हैं कि कुछ पूंजी की सहायता देकर इस काम के लिये स्वयंसेवक तैयार करें कि वे देहाती घानियों का तेल शहरों में बेचें। ऐसा करने से शहरवासियों को सुविधा होगी और श्रम करने की तैयारी रखनेवाले स्वयंसेवकों को आजीविका एक साधन मिल जायगा। पर घानी पर पुस्तक क्या लिखना ! यह तो हजारों वर्षों से चली आयी अनगढ़ पद्धति से तेल निकालकर आपको देती आरही है। इसमें विशेषता क्या है ?

भारतीय संस्कृति के कट्टर अभिमानियों की भी साधारणत यही विचारप्रणाली होती है। धार्मिक मान्यताएँ और रोटी बेटी व्यवहार संबंधी नियम इतने ही को जो लोग संस्कृति मानते हैं उनको संस्कृति का असली मतलब मालूम ही नहीं हुआ है। किसी भी किस्म की चर्चा छेड़े बिना गांधीजी ने स्वराज्यप्राप्ति से भी बढ़कर ऐसा जो भारतीय संस्कृति का पुनरुज्जीवन का महान कार्य है वह खादी और ग्रामउद्योगों द्वारा करने की ठानी है। हमारी आज की राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक हालत को देखते हुए हमारे सामने दूसरा कोई रास्ता नहीं है।

क्या चर्खा और क्या घानी सभी छोटे छोटे और सादे यंत्र अनगढ़ चीजें नहीं हैं। हजारों बरसों का चिंतन, हजारों लोगों का प्रयोग और अनेक प्रांतों का अनुभव इनके साथ लगा हुआ है। पिछले सौ पचास सालों से या इससे भी अधिक लंबे समय से हम हर तरहसे आलसी बन बैठे और नतीजा यह हुआ कि अपने तमाम उद्योगधंधों में काम आनेवाली यांत्रिक तथा व्यवहारिक बुद्धि और सूझको पीछे खींच लिया। जिस प्रकार भाफ के एंजिन में से भाफ के निकल जाने से वह थोड़ी दूरतक दौड़कर रुक जाता है, उसी तरह हमने अपने समाज की, और खासकर उद्योग धंधों की भी, यही दशा होने दी।

योरप से आये हुई भाफ और बिजली के बड़े बड़े यंत्रों को देखकर हम चौंधिया गये। हमने मान लिया कि अकेले योरप में ही यांत्रिक बुद्धि संभव है। लेकिन वैसा समझने में हमने भूल की। हमारे यहाँ आज भी हुनर, कारीगरी, कलाकौशल और यांत्रिक सूझ योरप से किसी कदर कम नहीं है। योरप जो आगे बढ़ा, वह किसी और बातमें। कलाकारीगरी की मदद में भाफ, बिजली, तेल की गैस, वगैरह को किस तरह काम में लाया जा सकता है, इस हिकमत को उसने खोज निकाला, और ज्यादा पूंजी और बड़ेबड़े कारखाने खोल के किस तरह अधिक से अधिक परिमाण में उत्पादन और बाजारों पर पूरा कब्जा किया जाय, यह भी उसने खोज लिया। या यों कहें कि इसके लिये कोई उपमा देनी हो, तो कारीगरी और कलाबुद्धि

से कमानी से कई बड़ा काम नहीं लिया जा सकता। बढ़ई उत्तम और महीन काम बिना हथौड़े के ही कमानी से करता है और इसीमें उसकी कला है। लेकिन बड़ेबड़े काम करते समय कमानी के सिरपर हथौड़ा मारे बिना उसका काम किसी तरह नहीं चलेगा।

हमारे यहां मनुष्यने जैसे जैसे औजारों को काम में लाने की आदत में उन्नति की, वैसे वैसे उस में छोटे बड़े सुधार भी किये। छोटे औजारों में और बड़े यन्त्रों में यही अंतर है। यह सच है कि बड़े बड़े यन्त्रों की खोज करनेवाले यन्त्रशास्त्री की कल्पना बड़ी होती है, परन्तु ये यन्त्र मानवी शक्ति से नहीं चलते। इनके चलानेमें मनुष्य की कुशलता या यान्त्रिक बुद्धि का कोई उपयोग नहीं होता, इससे इन यन्त्रों को चलानेवाला या सम्भालनेवाला खुद एक यन्त्र अथवा यन्त्र का एक अंग बन जाता है। नतीजा इसका यह होता है कि उसकी बुद्धि में अमुक प्रकार की जागृति होते हुए भी बुद्धि की तेजस्विता और कल्पनाशक्ति बिलकुल कुण्ठित हो जाती है। संस्कृति की दृष्टिसे यह बहुत बड़ी हानि है। छोटे औजारों और यन्त्रों को हाथसे चलानेके कारण मनुष्य की शक्ति का पूरापूरा उपयोग तो होता ही है पर साथ ही मनुष्य को प्रतिक्षण अपनी बुद्धि, सूझ और निर्णयशक्ति का भी प्रयोग करना पड़ता है। इसलिये हाथसे तैयार किये हुए मालमें मनुष्यका चैतन्य भरा रहता है और कारीगर का मन भी विकसित होता है, और इसलिये हाथ की कारीगरी मनुष्य जाति की उन्नति के लिये आशीर्वादरूप है।

विज्ञान में हम पिछड़े हुए हैं। हमारी पूंजी हमारे हाथमें नहीं अथवा सार्वजनिक हितके लिये हम उसे इस्तेमाल कर सकें ऐसी हमें स्वतन्त्रता नहीं, इसलिये हमारे पास जो कारीगरी पड़ी है उसे हम भूल जायें और उसके विकास का विचार करना भी छोड़ दें यह कैसे हो सकता है?

हम देखते हैं और कहते भी हैं कि यन्त्रवाद ने योरप को बरबाद कर डाला, लेकिन इम परसे हम यह नहीं मानलेना चाहिये कि कला और कारीगरी खराब चीज हैं। कारागरी तो बढ़नी ही चाहिये। हमें हर तरह की योग्यता का विकास करना चाहिये। परन्तु हमारे सारे सामाजिक जीवन को

बिगाड़नेवाला पूंजीवाद, और मनुष्यको बेकार बनाकर उसकी जगह प्राकृतिक शक्तियों का उपयोग कर उद्योग हुन्नर को पूंजीवाले के हाथ में सौंप देने वाली उद्योग व्यवस्था, ये दोनों ही चीजें खराब हैं। हमें इन्हीं का सामना करना है। छोटे छोटे औजारों के जरिये अपनी योग्यता का विकास कर सुधरे हुए रूप में अपनी आवश्यकताएँ पूरी करना और इसी मार्ग से मनुष्य समाज का उद्धार हो सकता है, इसे मानकार ही तो हमने राष्ट्रीय झंडे के ऊपर कारीगरी का द्योतक 'चर्खा' रखा है। इसलिये यहाँ हमें 'यन्त्रवाद' शब्द का प्रयोग नहीं करना चाहिये, कोई दूसरा ही शब्द प्रयोग में लाना चाहिये।

आर्थिक और सामाजिक शक्ति को एक हाथ में सौंपकर अनेकों को वश में रखना भारतीय संस्कृति के आदर्श के सर्वथा विरुद्ध है। और इसी से "बहुतसी पूंजी हाथमें आयी हो, तो भी मैं अमुक रकम से अधिक पूंजी व्यापार में न लगाऊँगा" इस तरह का व्रत लेने की भावना हमारे उस कालके धर्मनिष्ठ व्यापारियों को सूझती थी। इस तरह का भी व्रत लिया जाता था कि 'हम इतने बैलोंसे ज्यादा काफ़िला अपने खाते में न रक्खेंगे'। मनुष्य जाति की जरूरतों को पूरा करने वाला माल तैयार करने का मौक़ा ज्यादा से ज्यादा लोगों को मिलना चाहिये। इनके बीच में महाजन द्वारा सहयोग का भाव भले ही फैले लेकिन ऐसी व्यवस्था थी कि हरएक कारीगर और हरएक व्यापारी स्वतन्त्रता का उपयोग कर सके और वह जहा है वहीं रहकर समाज की सेवा कर सके। हमारी संस्कृति की अर्थव्यवस्था का यह भी एक प्रधान लक्षण था कि माल तैयार करनेवाले और माल खरीद कर उपयोग करनेवाले, इन दोनों में जहाँतक हो सके, सीधा संबंध बना रहे। ये लक्षण रूढ़ि से इतनी अच्छी तरह सँभाल दिये गये थे कि समाज के अगुआ इनमें समाये हुए तत्त्वज्ञान को समझने और उसे सँभालने का फर्ज भी भूल गये थे और पश्चिम का हमला होते ही पराजित लोग जिस तरह भयभीत होकर ठिठक जाते हैं, उसी तरह डरकर हमने अपना घर सँभालना भी छोड़ दिया।

को आशीर्वाद दे सकता है। लेकिन इस वचन का वास्तविक अर्थ तो यही होता है कि ब्राह्मण का हर एक वर्ण की विद्या और कला सीखनी चाहिये। किसी भी सामाजिक उथल पुथल से कोई वर्ग दबाया जाता हो, तो उस ओर तुरन्त ध्यान खींचने और उसका इलाज बतलाने की जिम्मेदारी ब्राह्मणों की थी। अपनी ऐसी जवाबदेही समझकर आज जो चलेगा, वही ब्राह्मण कहलाने का अधिकारी है। इसमें रोट बेटी का सवाल ही नहीं उठता। जिस समाज में ऐसा ब्राह्मण वर्ग नहीं होता, वहाँ वर्ग कलह चलना ही चाहिये। समबुद्धि से सर्वलोकहित में लगे रहने वाला वर्ग जहाँ नहीं होता, वह समाज ही नहीं। यह तो सूक्ष्मतया वढने वाले युद्धका रणक्षेत्र ही कहा जायगा।

हिन्दुस्तान म हजारों-लाखों वर्षों से उन्नत कारीगरी के ऊपर फिर से विश्वास जमाकर, जहाँ से हमने अपनी जिम्मेवारी का सूत्र छोडा था वहाँ से फिर उसे अपने हाथ मे लेकर और कारीगरों के जीवन में ओतप्रोत होकर उन के धधों और उनकी लोकयात्रा को सजीवन करने का जो प्रयत्न शुरू हुआ है, उसके बयान के रूप में यह पुस्तक तैयार हुइ है। स्व मगनलाल भाईने जब 'वणाट-शास्त्र' लिखा तभी इस काम का वास्तवमें प्रारंभ हुआ। वास्तव में बुनाई शास्त्र सजीवन करने का काम किसी पेशेदार बुनकर का अथवा किसी ब्राह्मण का था। पर ये दोनों अपना धर्म भूल गये इसलिय एक को बुनकर तथा ब्राह्मण दोनों बनना पडा।

हमारी सामाजिक जीवन व्यवस्था जैसी आज है उसीको लेकर हमें आगे बढना होगा। इसके बदले, मुझे तो ऐसा मालूम होता है, मानों हम मुफ़लिसी की अदालत में पहुँचकर अपना दिवाला निकालने के लिये तैयार हो रहे थे, इतने ही में गांधीजी की प्रेरणा से राष्ट्रीय महासभा को सुबुद्धि सूझी और हमने कारीगरों के जीवन में, उनके आर्थिक मामलों और उनकी दस्त-कारी में प्रवेश करना शुरू किया।

इस पुस्तक को पढते समय सबसे पहली बात जो हमारा ध्यान खींचती है, वह यह है कि लेखक ने सरकारी रिपोर्टों और पाश्चात्य ग्रथोंको पढकर उनके आधार इसे तैयार नहीं किया, बल्कि स्वय अनेक प्रांतों में घूमकर वहा की घानियाँ किस तरह चलती हैं, उनमें क्या क्या सुविधाएँ असुविधाएँ हैं, इन सब की उन्होंने जाच पडताल की। उन्होंने पुरानी चली आयी हुई घानी

बिगाड़नेवाला पूंजीवाद, और मनुष्यको बेकार बनाकर उसकी जगह प्राकृतिक शक्तियों का उपयोग कर उद्योग दुन्तर को पूंजीवाले के हाथ में सौंप देने वाली उद्योग व्यवस्था, ये दोनों ही चीजें खराब हैं। हमें इन्हीं का सामना करना है। छोटे छोटे औजारों के जरिये अपनी योग्यता का विकास कर सुधरे हुए रूप में अपनी आवश्यकताएँ पूरी करना और इसी मार्ग से मनुष्य समाज का उद्धार हो सकता है, इसे मानकर ही तो हमने राष्ट्रीय झंडे के ऊपर कारीगरी का द्योतक 'चर्खा' रखा है। इसलिये यहाँ हमें 'यन्त्रवाद' शब्द का प्रयोग नहीं करना चाहिये, कोई दूसरा ही शब्द प्रयोग में लाना चाहिये।

आर्थिक और सामाजिक शक्ति को एक हाथ में सौंपकर अनेकों को वश में रखना भारतीय संस्कृति के आदर्श के सर्वथा विरुद्ध है। और इसी से "बहुतसी पूंजी हाथमें आयी हो, तो भी मैं अमुक रकम से अधिक पूंजी व्यापार में न लगाऊँगा" इस तरह का व्रत लेने की भावना हमारे उस कालके धर्मनिष्ठ व्यापारियों को सूझती थी। इस तरह का भी व्रत लिया जाता था कि 'हम इतने बैलोंसे ज्यादा काफ़िला अपने खाते में न रक्खेंगे'। मनुष्य जाति की जरूरतों को पूरा करने वाला माल तैयार करने का मौक़ा ज्यादा से ज्यादा लोगों को मिलना चाहिये। इनके बीच में महाजन द्वारा सहयोग का भाव भले ही फैले लेकिन ऐसी व्यवस्था थी कि हरएक कारीगर और हरएक व्यापारी स्वतंत्रता का उपयोग कर सके और वह जहां है वहीं रहकर समाज की सेवा कर सके। हमारी संस्कृति की अर्थव्यवस्था का यह भी एक प्रधान लक्षण था कि माल तैयार करनेवाले और माल खरीद कर उपयोग करनेवाले, इन दोनों में जहाँतक हो सके, सीधा संबंध बना रहे। ये लक्षण रूढ़ि से इतनी अच्छी तरह सँभाल दिये गये थे कि समाज के अगुआ इनमें समाये हुए तत्वज्ञान को समझने और उसे सँभालने का फर्ज भी भूल गये थे और पश्चिम का हमला होते ही पराजित लोग जिस तरह भयभीत होकर ठिठक जाते हैं, उसी तरह डरकर हमने अपना घर सभालना भी छोड़ दिया।

"वर्णाना ब्राह्मणो गुरु" का अर्थ पतित ब्राह्मणों ने इतना ही लगाया कि ब्राह्मण सब वर्णों के पास से दक्षिणा ले सकता है और पैर छूनेवाले

को आशीर्वाद दे सकता है। लेकिन इस वचन का वास्तविक अर्थ तो यही होता है कि ब्राह्मण को हर एक वर्ण की विद्या और कला सीखनी चाहिये। किसी भी सामाजिक उथल पुथल से कोई वर्ग दबाया जाता हो, तो उस ओर तुरन्त ध्यान खींचने और उसका इलाज बतलाने की जिम्मेदारी ब्राह्मणों की थी। अपनी ऐसी जवाबदेही समझकर आज जो चलेगा, वही ब्राह्मण कहलाने का अधिकारी है। इसमें रोटी बेटी का सवाल ही नहीं उठता। जिस समाज में ऐसा ब्राह्मण वर्ग नहीं होता, वहाँ वर्ग कलह चलना ही चाहिये। समबुद्धि से सर्वलोकहित में लगे रहने वाला वर्ग जहाँ नहीं होता, वह समाज ही नहीं। वह तो उत्तमतया बढ़ने वाले गुटों का रणक्षेत्र ही कहा जायगा।

हिन्दुस्तान में हजारों-लाखों वर्षों से उन्नत कारीगरी के ऊपर फिर से विश्वास जमाकर, जहाँ से हमने अपनी जिम्मेवारी का सूत्र छोड़ा था वहाँ से फिर उसे अपने हाथ में लेकर और कारीगरों के जीवन में ओतप्रोत होकर उन के धंधों और उनकी लोकयात्रा का सजीवन करने का जो प्रयत्न शुरू हुआ है, उसके बयाने के रूप में यह पुस्तक तैयार हुई है। स्व० मगनलाल भाईने जब 'वणाट शास्त्र' लिखा तभी इस काम का वास्तव में प्रारंभ हुआ। वास्तव में बुनाई शास्त्र सजीवन करने का काम किसी पेशेदार बुनकर का अथवा किसी ब्राह्मण का था। पर ये दोनों अपना धर्म भूल गये इसलिए एक को बुनकर तथा ब्राह्मण दोनों बनना पड़ा।

हमारी सामाजिक जीवन-व्यवस्था जैसी आज है उसीको लेकर हमें आगे बढ़ना होगा। इसके बदले, मुझे तो ऐसा मालूम होता है, मानों हम मुफलिसी की अदालत में पहुँचकर अपना दिवाला निकालने के लिये तैयार हो रहे थे, इतने ही में गांधीजी की प्रेरणा से राष्ट्र महासभा को बुद्धि सूझी और हमने कारीगरों के जीवन में, उनके आर्थिक मामलों और उनकी दस्तकारी में प्रवेश करना शुरू किया।

इस पुस्तक को पढ़ते समय सबसे पहली बात जो हमारा ध्यान खींचती है, वह यह है कि लेखक ने सरकारी रिपोर्टें और पाश्चात्य ग्रंथों को पढ़कर उनके आधार इसे तैयार नहीं किया, बल्कि स्वयं अनेक प्रान्तों में घूमकर वहां की घानियाँ किस तरह चलती हैं, उनमें क्या क्या कमियाँ असुविधाएँ हैं इन सब की उन्होंने जाँच पड़ताल की। उन्होंने पुरानी ...

पर श्रद्धा रखकर उसका निरीक्षण परीक्षण किया है। उसके पीछे रही क
बुद्धि की क़द्र करके ही वह इन वस्तुओं की खोज करने बैठे हैं, औ
गणितशास्त्र की मदद से, हरएक नमूने के गुणदोषों को आँकड़ों के साथ
प्रमाणित कर सके हैं।

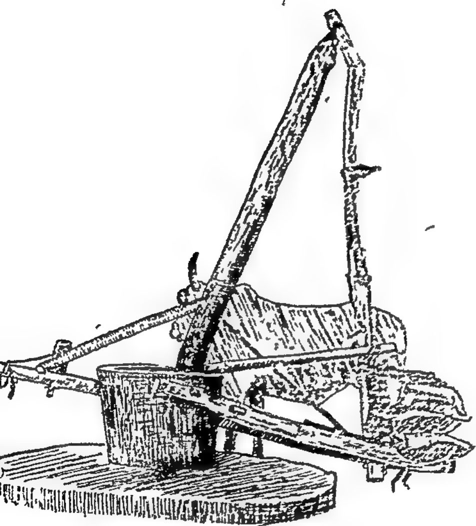
यदि शिक्षित मनुष्य (फिर वह पढ़ा-लिखा हो या न हो) अप
बुद्धि का लाभ ऐसे धधों को पहुँचाय तो उनमें छोटे छोटे अनेक सुधार
देगा और वह मनुष्यों के और पशुओं के हक़ में भी आशीर्वादरूप सा
होगा। जुदी जुदी लकड़ी के गुणदोष, घानी के जुदे जुदे नमूनों के गु
दोष, घानी चलानेवाले हरएक जाति के जानवर की सुविधा और घानी
पेरे जानेवाले तिलहन की खासियत इन सारी वस्तुओं की नई
खोज करके इसका शास्त्र रचा जाना चाहिये। उसमें पाकशास
कार्यताशास्त्र, यन्त्रशास्त्र, पशुविद्या, व्यवस्थाशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र, आहार शास्
इत्यादि अनेक शास्त्रों का उपयोग होगा। और उन उ शास्त्रों के विशारदों
बीच सहयोग का भाव बढ़ेगा। गावों में जब उद्योगप्रधान शिक्षा शुरू
जायगी, तब ऐसी पुस्तकें पाठ्य पुस्तक के रूप में उपयोग में लाई जायँगी।

स्व मगनलाल भाइके 'वणाटशास्त्र' और 'तकली शिक्षक' लिख
के बाद साबरमती में, बारडोली में, कलकत्ते के खादी प्रतिष्ठान में, नालवाड
में और सावली में कई प्रयोग हुए हैं और प्रगति भी काफ़ी हुई है, प
अभीतक "वणाट शास्त्र" की संशोधित आवृत्ति नहीं निकली है। ऐसा इ
शास्त्र के निस्बत न हो। घानी के शास्त्र की सारे हिन्दुस्तान को जरूरत है
किसान को ताल्लुक बुनने के साथ जितना है, उससे कहीं अधिक तेल
धधे के साथ है। तेल और खली के बगैर किसान और उसके बैलों का ए
दिन भी काम नहीं चल सकता। इसलिये हरएक किसान को तेल के धध
में होशियार तो होना ही चाहिये, फिर प्रत्यक्ष घानी चलाने का काम वह चाह
खुद करे या चाहे गाव के तेली से करावे।

ऐसे छोटे छोटे उद्योग धधोंका पुनरुद्धार भारतीय संस्कृति, भारती
जीवनव्यवस्था और भारतीय अर्थनीति की दृष्टि से ही हो सकता है। अत
हमें वह दृष्टि व्यापक पैमाने पर पैदा करनी होगी।

वर्धा, अक्टूबर १९३७ दत्तात्रय बालकृष्ण कालेलकर

विषय-सूची



मगनवाडी घानी

तेल की मिल बनाम घानी

१ घानी की मौजूदा हालत

"सर्वे गुणा काचनमाश्रयन्ते" अर्थात् सारे गुण पैसे का आश्रय लेते हैं। बडी २ तेल की मिलें अपना उल्लू सीधा करनेवाले पूंजीपतियों की बपौती हैं। वे इनमें न केवल अमर्याद पूंजी ही लगाते हैं वरन् उनके प्रचार के लिये भी काफी पैसा बरबाद करते रहते हैं। परिणाम यह हुआ है कि उनकी ओर जनता का ख्याल उनकी वास्तविक उपयुक्तता के उल्टे अनुपात मे खींचा गया है और सभी प्रकार के यन्त्रों की बडी इकाइयों की कार्यक्षमता में उनकी एक किस्म की अन्धश्रद्धासी पैदा होगई है। बडे यन्त्रों की इस अधिक कार्यक्षमता का अङ्गीकार करके उनके हामी जहा एक ओर रहन सहन का पैमाना ऊचा उठाने की गरज से इनका समर्थन करते हैं तहा जो इनके विरुद्ध हैं वे केवल आर्थिक दृष्टि से इस सवाल की चर्चा करने से हिचकिचाते हैं। इस एकागी प्रचार के कारण लोगों में एक यह भी धारणा फैल गई है कि तेल की मिलों ने घानियों को करीब-करीब स्थानभ्रष्ट कर ही दिया है और अब उनका पुनश्च प्रचार होना कठिन है। यह मान्यता वस्तुस्थिति से बिल्कुल भिन्न है। तेल की मिलें अपना काम कर रही हैं और उनकी सख्या भी कुछ बढ गई है यह बात सही है, पर उनमें जो तेल पेरा जाता है वह अधिकाश देश की वर्धमान औद्योगिक जरूरता को पूरा करनेवाला होता है, खाने के काम में वह काम आता है। इस दृष्टि से मिलें घानियों की पूरक साबित हुई हैं न कि उनका स्थान लेनेवाली। दूसरी बात यह है कि मिलों के आने से स्पर्धा निर्माण होगई है जिसके कारण घानी का अस्तित्व खतरे में पड गया है।

ऐसा होते हुए भी घानी का स्थान आज भी अभिमानास्पद है क्योंकि खाने के काम आनेवाले तेल का अधिकाश घानियोंमें ही पेरा जाता है। दुर्भाग्य से औद्योगिक कामों में इस्तेमाल किये जाने वाले अलसी और मूगफली के तेलों के अलावा अन्य तेलों के घानी के और मिलों के तुलनात्मक आकड़े

उपलब्ध नहीं हैं। छोटे पैमाने पर किये जाने वाले उद्योगों के प्रति सरकार की कितनी सहानुभूति है यह इस पर से जाहिर होता है। जिन दो किस्म के तेलो के आकडे उपलब्ध हैं उनके अनुसार हिंदुस्तान में पैदा होनेवाली कुल तिलहन का ११ प्रतिशत घानियों मे और १७ प्रतिशत मिलों में पेरा जाता है। नीचे दिये हुए आकडो मे यह बात स्पष्ट होगी।

१९३५—३६

तिलहन	पैदावार (टनो में)	निर्यात के बाद कितना बचता है (टनों में)	कुल पेराइ (टनों में) (घानियों मे)	(मिलों में)
अलसी	४,८८,०००	२,५५,०००	६०,०००	१,२३,०००
मूंगफली	२,८८,२२,०००	१७,१०,०००	३,८०,०००	७,२०,०००
			५,४७,०००	८,४३,०००
	कुल पैदावार का प्रतिशत		११	१७

मूंगफली, अलसी और अडी मिलाकर हिन्दुस्तान की कुल तिलहन की पैदावार का ½ होता है। पर निर्यात और अन्य घरेलू कामों में इस्तेमाल होनेके बाद इनका १७ प्रतिशत मिलों मे और ११ प्रतिशत घानियों में इस प्रकार कुल २८ प्रतिशत ही पेरा जाता है। अन्य किस्म के तिलहनों की निर्यात बहुत कम होती है और उनकी भी पूरी पैदावार का क़रीब २८ प्रतिशत पेरा जाता है। चूंकि इनकी पेराइ के आकडे उपलब्ध नहीं हैं इसलिये कितनी तिलहन मिलों में और कितनी घानी मे पेरी जाती है इसके तुलनात्मक आकड़े देना कठिन है, पर यदि हम युक्तप्रात और मद्रास प्रात के तेल के उत्पादन के प्राप्य आकडे आधारभूत मान लें तो इनका अनुपात १ २ अर्थात् मोटे तौर पर पूरी पैदावार का १७ प्रतिशत और ११ प्रतिशत के ही करीब पडता है। इस तरह दोनों विभागों को मिलाने से कुल तिलहन पेराई पैदावार का ५६ प्रतिशत होती है जिसमें आधी मिलों में और आधी घानियों में।

२ झूठा दावा

अपनी हस्ती का समर्थन करने के लिये हिंदुस्तान की तेल की मिलों के पक्ष मे एक ऐसी खास दलील दी जाती है कि यदि अधिक मिलें खोली जायेंगी तो देश के देश में ही अधिक तिलहन पेरी जाकर

निर्यात करेंगे जिससे तिलहन की निर्यात को रोकने के साथ ही साथ हम खली के रूपमें राष्ट्र का एक मुफ़ीद चीज दे सकेंगे। कार्यक्षमता के अभाव के कारण घानियों द्वारा यह काम नहीं हो सकता। निर्यात संबंधी आंकड़ों का परिशीलन करने से यह तो स्पष्ट होता है कि उत्तरोत्तर तिलहन नियात कम क्रम होती आरही है, पर उससे खली देश में ही रह पाती हो सो बात नहीं। मिलों की हस्ती कायम रखने के लिये जो दलील दी जाती थी उसी को मिल मालिकों ने जड़ से उखाड़ दिया। क्योंकि युद्धजन्य परिस्थिति के कारण विवश होने तक सारी मिलों की खली का अधिकांश भाग विदेशों को ही भेजा जाता रहा। इस प्रकार मिल मालिक "जैसा चले बयार, पीठ पुनि तैसी दीजे" वाली कहावत चरितार्थ करते रहे।

३ कार्यक्षमता की तुलना

हमारा कुछ स्वभाव ही होगया है कि कार्यक्षमता हम बड़े यंत्रों में और बड़े पैमाने की उत्पत्ति में ही मानते हैं। अगर कार्यक्षमता की कसौटी राष्ट्रीय सम्पत्ति की वृद्धि और जनता की अधिक क्रयशक्ति ही मानी जाय, एक श्रेणी के लोगों की दूसरी श्रेणी के लोगों के मूल्य पर अधिक कमाने की शक्ति नहीं, तो हम लोगों में से अधिकांश के लिए यह जानना एक आश्चर्यकारक निर्णय होगा कि बड़े पैमाने की तेल की मिलों में एक अच्छी घानी से अधिक क्षमता नहीं होती। बहुतसी तेल की मिलें जो केवल तेल पेरने का ही काम करती हैं, अन्य सहायक उद्योग, जैसे साबुन बनाना, रंग और वार्निश तैयार करना, नहीं करतीं,—ये लाभ पर नहीं चलतीं और इसलिए प्रायः उनके मालिक बदलते रहते हैं। धनी व्यक्तियों के एक वर्ग में तेल की मिलें चलाने का कुछ उन्माद सा होता है। उन्हें अव्यावसायिक ढंग से चलाकर नुकसान उठाते हैं और फिर उन्हें बेच देते हैं। उदाहरणार्थ, विदर्भ और खानदेश में इतनी तेल की मिलें हैं कि उनके लिए बीज भी नहीं मिल पाता और इसलिए वे उतना काम नहीं कर पातीं, जितना कि कर सकती हैं। ये मिलें तो इसलिए चलती हैं कि उनके मालिकों के पास नुकसान बर्दाश्त कर लेने के लिए पर्याप्त धन है। ये इसलिए नहीं चल रही हैं कि उनमें कार्यक्षमता है।

तेल के अधिक प्रतिशत से और कम पिराई से मिलें,जो कुछ बचाती हैं वह दलालों के कमीशन में चला जाता है। इस तरह घानियों से अधिक मिलों

को कोई लाभ नहीं है। लेकिन बड़े पैमाने पर उत्पत्ति करके खर्च और बिक्री की कीमत मे न्यूनतक सीमान्त रख सकती हैं। यही बात घानियों के बारे में भी हो सकती है, यदि मालिक बहुतसी घानियों चलावें और उत्पत्ति बड़े पैमाने पर करें। लेकिन इसके विरुद्ध हमें रोक लगानी चाहिए, क्योंकि उसका नतीजा सम्पत्ति का केन्द्रीकरण और साथ ही जनता की क्रयशक्ति का ह्रास होता है।

इस प्रकार बड़े पैमाने की उत्पत्ति राष्ट्रीय सम्पत्ति में वृद्धि नहीं करती। यह स्वतंत्र दस्तकारों को नौकर बना देती है, उनकी बचत दलालों को पहुँचती है, बहुतों को वह रंक बना देती है, जिनके कारण केवल थोड़े ही लोग लाभ उठाते हैं। इसलिए बिना इस बात का ख्याल रखे कि वह बड़ी मशीनरी की सहायता से की जाती है या घानियों की सहायता से, बड़े पैमाने की केन्द्रीत उत्पत्ति को नहीं चलने देना चाहिए।

नीचे के नक्शे में यह दिखाया गया है कि एक अच्छी घानी से अधिक क्षमता मिल में नहीं होती। इसमें घानी और मिल के एक टन तेल पेरने का युद्ध पूर्व के भावों से तुलनात्मक व्यय दिखाया गया है।

	मूगफली रु आ पा	तिल रु आ पा	अलसी रु आ पा	अंडी रु आ पा
बम्बई की एक मिल में	२१-१४-६	२४-२-९	३५-१०-९	३२-२-०
मगनवाड़ी घानी में	४७-०-०	४७-०-०	८३-७-९	४७-०-०
पिराई में अंतर	२५-१-६	२२-१३-३	४७-१३-०	१४-१४-०
घानी में तेल कम प्रतिशत में निकलने के कारण अंतर	१५-०-०	१५-०-०	२२-८-०	१५-०-०
अंतर का योग	४०-१-६	३७-१३-३	७०-५-०	२९-१४-०
एक पौण्ड पर अंतर	०-०-३¼	०-०-३	०-०-६	०-०-२¼
" " कमीशन	०-०-२	०-०-४	?	?

यह ध्यान में रखना चाहिए कि मिल की पिराई का खर्च लगाने में चार लाख की लागत पूँजी का ब्याज और मशीनरी की छीजन का खर्च नहीं लगाया गया।

घानी के पिराई के खर्च में आठ आना प्रतिदिन के हिसाब से तेली की मजदूरी आजाती है। इसका अर्थ यह है कि वह मिल के फुटकर भाव पर तेल बेच सकता है और मिल के थोक भाव पर खली। यदि वह सीधे ग्राहक को खली

बेचे तो उसे फुटकर बेचनेवाले के कमीशन के बराबर पैसा और मिल जायगा।

यह भी है कि देश के विभिन्न भागों में स्थित तेल की सब मिलों की स्थिति एक समान नहीं है। बन्दरगाहों की मिलो को अंतर्भाग की मिलों से अधिक सुविधाएँ होती हैं। रेल्वे की भाड़े की नीति से ऐसी मिलों को तेल के बीज सस्ते भाव में और वर्षभर मिलने म मदत मिलती है। इसलिए तमाम साल ये अपनी पूरी शक्ति से चलती हैं और इसलिए अन्तर्भाग में स्थित मिलों की अपेक्षा उनकी पिराई कम पड़ती है। चूँकि मिलें अधिकाश खली बाहर भेजती हैं, इसलिए अन्तर्गत की मिलों को पास के बन्दरगाह तक खली भेजने का रेलभाड़ा और देना पड़ता है और उतना उन्हें कम मिलता है। इस सब का अर्थ यह है कि अन्तर्भाग में स्थित मिलों को तेल बदरगाहों पर स्थित मिलों की अपेक्षा ऊँचे भाव पर बेचना पड़ता है। हमने ऊपर जो हिसाब दिया है वह एक बदरगाह की मिल का है।

नक्शे में दी हुई मिल चूँकि अलसी और अंडी के तेल से वार्निश और दवाइयों के तेल बनाती है, इसलिए कच्चे तेलों के ठीक कमीशन प्राप्य नहीं हैं। लेकिन दूसरी जगह वे घानी और मिल के तेल पेराई के दामों के अन्तर की पूर्ति निश्चित ही करते हैं। इस सबध में यह स्मरण रखना महत्त्व-पूर्ण है कि कमीशन की दर जो मिल की जगह पर कम है, वही बहुत ज्यादा हो जाती है, जब तेल दूर के गावों मे पहुँचता है।

इसी तरह जहाँतक उपभोक्ता का सबध है, वहाँ तक मिलद्वारा तेल की पिराई, जिसमें दलालों का लाजिमी कमीशन भी सम्मिलित है, उतनी ही पड़ती है जितनी कि देशी घानी की। दूसरे शब्दों म, ग्राहक को बड़ी तेल की मिलों की तथाकथित क्षमता से कोई लाभ नहीं होता है। अब हम देखेंगे कि तेल की मिलें कोइ दूसरा उपयोगी काम पूरा करती हैं या नहीं।

उदाहरण के लिए हम सरसों का तेल लेकर पावर से चलनेवाली घानियों और एक्सपेलरों वाली तेल की मिल की कार्यशीलता पर विचार करेंगे। एक मिल २४ घटे काम करके २०० मन सरसों एक दिन में पेरती है और महीने में २५ दिन काम करके प्रति मास १७५० मन तेल निकाल लेती है। नीचे दिये नक्शे में मिल और उतने ही उत्पादन के लिये आवश्यक सख्या की मगनवाडी घानियाँ चलाने के युद्ध पूर्व के खर्च के विभिन्न मद दिये हैं। साथ म

यह भी ध्यान रक्खा गया है कि मिल प्रतिदिन चौबीस घंटे काम करती है जब कि घानी एक दिन मे केवल ८ घंटे। एक घानी का दाम मय बैल के १२५ रुपया है। साधारणतया यद्यपि एक आदमी दो घानी चला सकता है, पर काम और बिक्री की सुविधा के लिए नीचे दिया हिसाब दो घानियों पर एक आदमी और एक लड़के के हिसाब से लगाया गया है।

	सामान के लिये पूंजी	पिराई के खर्च का विश्लेषण					
		मजदूरी					
		मजदूरों की संख्या	रुपये	पावर	मरम्मत	ब्याज और छीजन	योग
मिल	३०,०००	१९	५०	८००	२५०	३५०	१९००
मगनवाड़ी घानी	२६ ५००	१४०	२१००	२१२०	२६५	२३५	४७२०

१७५० मन तेल निकालने के लिए मिल को ५,००० मन सरसों की आवश्यकता होती है। चूँकि घानी लगभग दो प्रतिशत कम तेल निकालती है, इसलिए मिलके बराबर तेल निकालने के लिए उसे १३० मन सरसों की और अधिक आवश्यकता होती है जिसमें ६ रुपया प्रतिमन के हिसाब से ७८० रुपये और लगते हैं। तेल के इधर उधर पहुँचाने मे मिल की कमीशन १२½ प्रतिशत या २ रुपया प्रतिमन के हिसाब से ३५,००) देना होता है। वह तेल १६ रुपया प्रतिमन के हिसाब से बिकता है। इसी आधार पर १७५० मन तेल का योगिक मूल्य इस प्रकार निकाला गया —

	खर्च मय पिराई के खर्च के	अतिरिक्त बीज का दाम	कमीशन	योग
मिल	३१,९००	×	३५००	३५,४००
मगनवाड़ी घानी	३४ ७२०	७८०	×	३५,५००

इसके अतिरिक्त मिलों को बीज, तेल और खली पर रेलभाड़ा और खर्च देना पड़ता है और यह अतिरिक्त खर्च आसानी से ऊपर के नक्शे मे दिये हुए मिल और घानी के तेल के बीच के प्रत्यक्ष मूल्य से कई गुना हो जाता है। चूँकि तेली स्वयं ही तेल बेचता है, इसलिए उसे कमीशन में कुछ भी नहीं देना पड़ता और चूँकि वह स्थानीय बीज लेकर पेरता है, इसलिए उसका रेल-भाड़ा भी बच जाता है। इस प्रकार उपभोक्ता के दृष्टिकोण से, मिलें घानियों की अपेक्षा तेल सस्ता नहीं दे पातीं। मिल को घानी की अपेक्षा सामान के लिए अधिक पूँजी की भी आवश्यकता होती है। मिल सातवें हिस्से भी कम आदमियों को काम देती है। वेतनरूप में वह चौथाई से कम सम्पत्ति का वितरण करती है। मिल पावर भी गलत इस्तेमाल करती है, क्योंकि बैल आदि जानवरों से यह काम नहीं लेती और न उन बढ़इयों को ही काम पर लगाती है जो आस-पास के गावों मे मिलते हैं। उनकी जगह मिल बाहर से आई मशीनें इस्तेमाल करती है और आखिर ग्राहकों को सस्ता तेल नहीं दे पाती। सारा किस्सा यहीं नहीं खत्म होता। मिल का कच्चा तेल खाने योग्य नहीं माना जाता। उसम जो सड़ान पैदा होती है उसे दूर करना जरूरी होता है। इस प्रकार इस तेल को शुद्ध करने का खर्च वास्तव में तेल की लागत की कीमत म शुमार होना चाहिये। घानी के तेल की मिल के कच्चे तेल से तुलना करना बिल्कुल गलत है। उसकी तुलना वास्तव म शुद्ध किये तेल से या वनस्पति घी से करनी चाहिये। ऐसा करने से सीदी सादी दिखनेवाली घानी कीमती और पेचीदगी से भरी तेल की मिल—तेल शुद्ध करने के यन्त्रों और हायड्रोजनेटिंग यन्त्रों से युक्त के बनिस्बत कई गुनी कार्यक्षम और उपयुक्त साबित होगी।

सच बात तो यह है कि लोगों का यह महसूस करना चाहिये कि इसमें एक छोटे औजार की बड़े औजार से तुलना नहीं है—घानी एक छोटा औजार है और तेल की मिल का यह एक बड़ा औजार है इस मान्यता पर—पर इसमें दो किस्म की संघटनाओं की तुलना है, एक विकेन्द्रित और दूसरी केन्द्रित। विकेन्द्रित संगठन हमेशा ठीक-ठीक कार्यक्षम नहीं होता और केन्द्रित पद्धति मे कार्यक्षमता पराकोटि को पहुँच जाती है ऐसा माननेवालों का भ्रम दूर करने के लिये उपर्युक्त विस्तार किया है।

केन्द्रित रूपमें बड़ी मात्रा का उत्पादन तो स्वयमेव एक बुराई है, क्योंकि

उससे शोषण को आधार मिलता है। शोषण संसार में हिंसा का मूल कारण है। अधिक मात्रा में उत्पादन करनेवाली तेल की मिलों की तरह यदि केन्द्रित उत्पादन क्षमतापूर्ण काम का दावा भी नहीं कर सकता तो बुराई और भी बढ़ जाती है।

यान्त्रिक शक्ति का उपयोग करने से जो संपत्ति के अतिरिक्त उत्पादन और असमान विभाजन की समस्यायें उपस्थित होती हैं उन्हें हल करने के लिये दो विकल्प सुझाये जाते हैं और ये दोनों इस मान्यता पर अधिष्ठित हैं कि ये सवालात यन्त्रों के उपयोग से नहीं बल्कि अन्य कोई बाह्य कारणों से पैदा होते हैं और ये बाह्य कारण यदि हटा दिये जायँ तो यान्त्रिकशक्ति का पूरा पूरा फायदा हमारे पल्ले पड़ जायगा। पहला है उत्पादन और विभाजन व्यक्तिगत न रखकर सामाजिक बना देना और दूसरा विकल्प है केन्द्रित पद्धति पर सारे यन्त्र एक जगह इकट्ठे न कर उन्हें पावर से चलाने वाले छोटे-छोटे गृहउद्योग के स्वरूप में देश के कोने-कोने में चलाया जाना। इन विकल्पों की युक्तायुक्तता पर विचार करने का यह स्थान नहीं है। यहां हम सिर्फ व्यावहारिक तौर पर यह दिखाना चाहते हैं कि जिन व्यवसायों की प्रक्रियाएँ बिलकुल आसान और सादी हैं, जैसे तेल पेराई, उनमें यान्त्रिक शक्ति, फिर वह बड़े पैमाने पर हो या छोटे, देहाती उपकरण से अधिक कार्यक्षम नहीं साबित होती। और यदि शुद्ध आर्थिक दृष्टि से यन्त्र अधिक कार्यक्षम न हो तो वह केवल यन्त्र है इसलिए उसे कोई इस्तेमाल करना नहीं चाहेगा।

घानी और मिल की तुलनात्मक कार्यक्षमता कूतने के लिये प्रथम हमें दोनों में के उत्पादन खर्च की तुलना करनी चाहिये। भिन्न २ इकाइयों के युद्ध पूर्व के भावों से उत्पादन खर्च इस प्रकार है —

	इकाई की शक्ति				प्रतिमन तेल का उत्पत्ति खर्च		
		मन	मन		रु०	आ०	पा०
१	प्रतिदिन	८०० से	१०००	तेल तैयार करनेवाली मिल	१	०	०
२	,,	५०० से	८००	,, ,,	१	२	०
३	,,	१०० से	५००	,, ,,	१	४	०
४	,,	४० से	१००	,, ,,	१	८	०

५	,,	१० से	४०	,,	,,	१	१२	०
६	,,	५ से	१०	,,	,,	२	०	०

७ बैल से चलनेवाली दो संशोधित घानियों की इकाई। इसमें प्रति घानी एक बार ८ सेर तिलहन पड़ता है और एक घान १॥ घंटे में खतम होता है। ८ घंटे के पूरे दिन में २ मन सरसों पेरी जाकर २६ सेर तेल मिलता है। प्रतिदिन का खर्च रु० ३।≈) होता है। इस पर से प्रतिमन तेल का उत्पादन खर्च— २ ७ ०

उपर्युक्त तालिका से कुछ बातें बिलकुल स्पष्ट होती हैं। पहली बात यह है कि यान्त्रिक शक्ति के कारण नहीं बल्कि कारखाने के बड़े मिक़दार के कारण उत्पादन खर्च कम आता है। यदि कारखाने और हस्तव्यवसाय की तुलनात्मक उपयुक्तता के विवाद्य विषय को अच्छी तरह से समझना हो तो यह मूलभूत बात ठीक तौर से समझ लेनी चाहिये।

दूसरी बात यह है कि कारखाने में माल बनने में कितना खर्च हुआ इससे ग्राहकों को कोई ताल्लुक ही नहीं। उन्हें तो बिक्री कीमत से ताल्लुक है और इस बिक्री कीमत में उत्पादन खर्च के अलावा उस माल के विभाजन खर्च की कई मदें शामिल रहती हैं। अब चूँकि उत्पादन खर्च कारखाने के कद के व्यस्त प्रमाण में कम होता जाता है इसलिये यह तो स्पष्ट है कि कारखाना जितना बड़ा उतना ही उत्पादन खर्च कम। पर जैसा हम ऊपर देख चुके हैं कि जितने अधिक पैमाने पर केन्द्रित उत्पादन होगा उतना ही उसके विभाजन का खर्च भी बढ़ेगा। इसलिए सिद्धान्त यह होगा कि जितना उत्पादन खर्च कम उतना ही विभाजन खर्च ज्यादा और जितना उत्पादन खर्च ज्यादा उतना ही विभाजन खर्च कम। अर्थात् कारखाने के कम उत्पादन खर्च से ग्राहक को कोई फायदा नहीं होता। यदि मिल रु० १) में एक मन तेल तैयार करती है तो उसे बेचने के लिये उन्हें पेकिंग, किराया, बीमा, इश्तहार, बिक्री के लिये कमीशन, रास्ते का नुकसान इत्यादि कई खर्च भी करने पड़ते हैं, पर देहाती तेली अपना तेल अपने स्थान पर ही बेचता है इसलिये वह इन सब खर्चों से बरी रहता है।

तालिका के नं० ६ की यान्त्रिक इकाई में विभाजन खर्च सबसे कम

तेल ही बेकार न जायगा, बल्कि जानवर का हाजमा भी बिगड़ जायगा। इससे यह बात स्पष्ट है कि उपरोक्त मर्यादा में १३ प्रतिशत तेल वाली खली से जो पौष्टिक भाग जानवर को मिलेगा वह ८ प्रतिशत तेलवाली खली की अपेक्षा कहीं अधिक होगा।

२ दूध देनेवाले जानवरों की खुराक में यदि तेल की मात्रा अत्यधिक हो जाय, तो उनके दूध का प्रमाण कम हो जाता है, ऐसा अनुभव किया गया है। कुछ खास-खास तेलों की निस्बत तो यह नियम बिलकुल ठीक पाया गया है। पर १,००० पौंड वजनवाले जानवरों को प्रतिदिन १ पौंड तेल देनेवाली खुराक खिलाने पर भी कोई नुकसान नजर नहीं आया। यदि उनको खुराक द्वारा अत्यधिक मात्रा में तेल खिलाया जाय, तो वह जरूर उनके हाजमे में गड़बड़ कर देगा, यह तो ऊपर लिख ही चुके हैं।

३ बिनौला और खोपरा इनके जैसे तेल खिलाने से जानवरों के दूध में चर्बी का प्रमाण बढ़ जाता है, पर वह कायम नहीं रहता। और जब किसी खास प्रकार की खुराक द्वारा दूध में की चर्बी बढ़ाई जाती है, तब उस चर्बी का स्वाभाविक स्वरूप बदलकर वह उस खास खुराक में की चर्बी का रूप ले लेती है।

दूसरे महाशय लिखते हैं—

१ घानी की खली में जो अतिरिक्त तेल रहता है, वह बेकार नहीं जाता, उसे जानवर हजम कर जाते हैं। खुराक की दृष्टि से घानी की खली मिल की खली से श्रेष्ठ है। उनके तुलनात्मक भावों पर उनकी उपयुक्तता निर्भर रहेगी।

२ खली में का कितना तेल जानवर हजम कर सकते हैं, इसके लिये कोई मर्यादा नहीं है। पीसा हुआ समूचा तिलहन भी जानवर हजम कर जाते हैं। पर इसका यह मतलब नहीं कि खुराक में चाहे जितना तेल दिया जाय तो भी जानवर उसे हजम कर जायँगे। तिलहन के तेल का ९५ प्रतिशत तेल जानवर हजम कर सकते हैं, बशर्ते कि वह योग्य प्रमाण में उन्हें दिया जाय। किस जानवर को कितने तेलवाली कितनी खुराक देनी चाहिये, यह उस जानवर की जात (breed) और उम्र पर अवलम्बित रहेगा। पर आमतौर से ऐसा कह सकते हैं कि १५ प्रतिशत तेलवाली खली जानवर बखूबी हजम कर सकते हैं।

३ खुराक के तेल का जानवर के दूध के घटकावयवों पर कोई असर नहीं होता।

४ खली के तेल से जानवर के दूध म की चर्बी का प्रमाण नहीं बदलता पर उसके गुण बदल जाते हैं। चर्बी के प्रमाण की घटबढ तो स्तन की स्रावक ग्रंथियों पर अवलम्बित रहती है, और इन पर खली की खुराक का कोई असर नहीं होता। जानवर की मामूली तन्दुरुस्ती या बीमारी से ही इनपर अच्छा या बुरा असर पडता है।

इन दोनों बडे तज्ञों की राय से जो सार्वनिक मान्यता है कि खुराक की दृष्टि से घानी की खली मिल की खली से श्रेष्ठ है, उसे पुष्टि ही मिलती है। इसलिये यदि घानी की खली कुछ महँगी भी मिले, तो भी वह नागवार नहीं होनी चाहिए।

और फिर घानी की और मिल की खली के तेल के प्रमाण म इतना ज्यादा फर्क नहीं है, जितना कि लोग समझते हैं। शाही कृषिसशोधन शाला के रसायनशास्त्री द्वारा सूचित मर्यादा के मुताबिक घानी की खली में १५ प्रतिशत से अधिक तेल शायद ही कभी रहता है और हिन्दुस्तान में प्रचलित घानियों की खली में तो तेल का प्रमाण इससे कम ही रहता है।

५ भिन्न २ इकाइयों की खली मे का तेल का प्रमाण

हारकोर्ट बटलर टेक्नॉलॉजिकल इन्स्टिटयूट कानपुर में अलग अलग इकाइयों की खली का पृथक्करण किया गया और उनमें नीचे दियेनुसार तेल पाया गया —

इकाइ	अलसी की खली	सरसों की खली	तिल की खली
१ मामूली कोल्हू बैलद्वारा चलनेवाला	१४ से १५%	१५ से १६%	१४ से १५%
२ सशोधित मगनवाडी घानी बैलद्वारा चलनेवाली	*१२ ५८%	११ २%	१२ ४५%*
३ बगामा घानी यान्त्रिक शक्ति से चलनेवाली	११%	१० ५ से ११%	११ से १२%

(*इनका पृथक्करण कॉटन ऑइल मिल, नवसारी, गुजरात ने किया है।)

कारीगर को उसकी अपने व्यवसाय की बाजू सम्हालने देना और उसकी आर्थिक जिम्मेवारी दूसरे किसी ने उठाना यह उपयुक्त ही है। इस प्रकार की कोइ सुसगठित व्यवस्था के अभाव में बेचारे तेली को सघन मिल-मालिकों से टक्कर लेना पड़ता है। यह हाल केवल तिलहन संग्रह करने के निस्वत ही नहीं बल्कि तेल की बिक्री में भी रहता है। देहात के लोग माल उधार खरीदने के आदि होते हैं। तेली की रोजी पर उसकी आजीविका अवलम्बित रहती है इसलिये वह उधार माल नहीं दे सकता। देहात का बनिया किसी तेल की मिल का एजेंट रहता है इसलिये वह उधार माल दे सकता है और सारे ग्राहक अपनी ओर खींच सकता है।

(आ) खली का निकास

ग्राहकों ने अपनी आवश्यकता की तिलहन संग्रह करना छोड़ देने से घानियों के सामने एक और समस्या उपस्थित हुई है। जब लोग अपनी अपनी तिलहन संग्रह करते थे तब वह अपने जानवरों को खली खिलाते थे। पर अब चूँकि वे तेल मोल लेते हैं इसलिये खली खरीदने की प्रवृत्ति उनकी कम रहती हैं। इसलिये खली के ग्राहकों के अभाव में तेलियों को अपनी घानियों को चालू रखना कठिन हो गया। मिलें अपनी खली का अधिकांश भाग विदेशों को भेज कर यह समस्या हल कर लेती हैं। इस प्रकार अपनी जरूरत की तिलहन संग्रह करने की आदत नष्ट होने से तेल पेराई का व्यवसाय घानियों के हाथ से मिलों के हाथ में जाने में सहायता हुई और साथ ही साथ हमारे जानवरों को उपयुक्त खुराक मिलने का एक जरिया भी हम खो बैठे।

कुछ किस्म की खलिया अधिक प्रचार में हैं और इसलिये वे जल्द बिक जाती हैं, पर अन्य बड़ी मुश्किल से कटती हैं। दूसरी एक यह भी बात है कि खलियों की बिक्री कीमतों का उनकी खाद्योपयोगिता के अनुसार सीधा अनुपात नहीं रहता। इसलिये घानी के लिये और भी अधिक उलझन पैदा होती है। जानवरों की खुराक की दृष्टि से कौनसी खली पसद करनी चाहिये यह जानने के लिये हम नीचे कुछ आकड़े दे रहे हैं —

मिल की भिन्न भिन्न खलियों की खाद्योपयोगिता*

खली की जाति	पानी	चर्बी	प्रोटीन	कार्बोहायड्रेट्स	रेषा	राख	भोजन की इकाई	तुलनात्मक कीमत
मूगफली	७ ९५	९ ६०	४८ २६	२३ ४९	४ १४	५ ३५	१६८	१००
तिली	५ १०	१० ७५	४१ ३१	२४ २३	४ ७०	१३ ७०	१५६	९२ ८५
सरसो और राई	३ १५	१० २०	२४ ६१	३६ ६४	८ ३५	[illegible] १५	१४८	८८ १०
छीलेहुए बिनौले	५ २०	९ ५०	३४ ९४	३४ ५१	९ ५५	८ ३०	१४६	८६ ९०
करडी	७ २५	९ ७०	३९ ६२	२० ४३	१४ ३५	९ १५	१४३	८५ १०
अलसी	७ ००	९ २०	३३ ३५	३५ ७०	७ ५०	७ ४५	१४२	८४ ५०
जगनी	९ ३५	७ ९५	३४ ०६	१४ ९४	१३ ७५	९ ८४	१३०	७७ ७४
नारियल	४ ५५	१४ ८५	२२ ९३	३४ ३७	१६ ८०	६ ६०	१२९	७६ ८०

किसी भी खाद्य पदार्थ की कीमत उसके भिन्न घटनाओं की उपयुक्तता और वे किस प्रमाण में मौजूद हैं इसपर अवलंबित रहती है। हजम होने वाली चर्बी और हजम होनेवाला प्रोटीन दोनों की उपयुक्तता एकसी ही मानी जाती है और वे दोनों अपने तई हजम होनेवाले कार्बोहायड्रेट से २.५ गुने अधिक उपयुक्त हैं। जब ये कीमतें जोड दी जाती हैं तब उनका योग उस खाद्य पदार्थ की बाजार की तुलनात्मक कीमत कितनी होनी चाहिये यह दर्शाता है। यही बात सूत्ररूप में इस प्रकार लिख सकते हैं —

(चर्बी×२.५)+(प्रोटीन×२.५)+कार्बोहायड्रेट=भोजन की इकाई।

(छ) मौजूदा घानियों मे कार्यक्षमता का अभाव

घानियों की गिरी दशा के लिये उनकी कार्यक्षमता का अभाव भी कुछ हद तक कारण हुआ है। हमने माना कि भिन्न भिन्न स्थानों की तिलहन में तेल का प्रमाण अलग अलग होता है, भिन्न भिन्न स्थान के तेलियों की कुशलता और बैलों की ताकत म फर्क होता है फिर भी एक घानी में एक दिन में १२ पौंड और दूसरी में ५२½ पौंड तेल निकलना, एक घानी में तेल की प्रतिशत २६ और दूसरी में ५० उतरना और एक टन तेल उ० तिली का पेरने के लिये रु० ७२) से रु० ३८५) तक खर्च आने का इसका एक मात्र कारण

* Some Cattle feeds of western India —by D L Sahasrabuddhe से उद्धृत।

घानियों मे कार्यक्षमता का अभाव ही हो सकता है। घानियों में काफी सुधार की गुंजाईश है इसमें कोई शक नहीं, इतना ही नही बल्कि यदि देहातों का तेल तेराई का व्यवसाय पुनरुज्जीवित करना हो तो घानी में संशोधन कर उसे अधिक कार्यक्षम बनाना ही पड़ेगा।

(ई) पूरक व्यवसायों का अभाव

जैसा कि हम पहले देख चुके हैं जो मिलें केवल तेल पेरने का ही काम करती हैं और अन्य कोई पूरक व्यवसाय नही करतीं वे मुनाफे मे नहीं चलतीं। इस अनुभव से फायदा उठाकर मिलें बहुधा साबुनसाजी, पेंट और वार्निश बनाना, वनस्पति घी बनाना आदि पूरक व्यवसाय उठा लेती हैं। घानियों को भी ऐसे मार्गों का अवलम्बन करके जो पूरक व्यवसाय उठाना सभव हो वे उठा लेने चाहिये। दो ऐसे व्यवसायों का जिक्र परिशिष्ट (ड) में किया गया है।

(उ) शुद्ध तेल की बिक्री की साख का तेली मे अभाव

ग्राहकों ने अपनी आवश्यकता का तिलहन सग्रह करना छोड दिया और साथ ही साथ तेल की मिलें भी घानियों से प्रतियोगिता करने लग गई, इसलिये तेलियों को तेल के व्यवहार मे मजबूरन अप्रामाणिकता का आश्रय लेना पडा। घानी का शुद्ध तेल मिल के तेल के भाव में बेच सकना उनके लिये असभव था इसलिये वे या तो घानी के तेल में मिल का तेल मिलाने लगे या घानी केवल बाह्य दिखाने के लिये रखकर निरवालिस मिल का तेल ही घानी के तेल के नाम से बेचने लगे। इसका परिणाम यह हुआ कि घानी के तेल की शुद्धता पर से ग्राहकों का विश्वास उड गया। घानी के तेल के नाम पर थोड़े अधिक दाम देकर मिल का ही तेल लेना ग्राहकों को नागवार हुआ।

दूसरी बात यह भी है कि तेली लोग गदे बर्तनोंमें गदे तरीके से तेल रखते हैं जिससे वह जल्दी बास मारने लगता है। ये सब बातें अपने व्यवसाय में उन्नति करने की ख्वाहिश रखनेवाले तेलियों के मार्ग में रोड़े अटकाने का काम करती हैं। सचमुच मे शुद्ध तेल बेचने की इच्छा रखनेवाले तेलियों पर भी लोग विश्वास नहीं रखते इसलिये उनका माल जल्दी नहीं कटता। तेलियों में संशोधित घानियों का प्रवेश कराने के प्रयत्न के सिलसिले में हमें कई जगह यह अनुभव मिला। उनकी मुख्य शिकायत यह रही कि जब हम मौजूदा घानियों का ही तेल नहीं बेच पाते तब अधिक तेल निकालनेवाली संशोधित घानी हम कैसे अपनायें?

जहां तेलियों का उपर्युक्त अनुभव हुआ वहां दूसरी ओर जिन्होंने अपनी जिंदगी में पहली बार ही घानी का काम उठाया उनको ठीक उल्टा अनुभव आया। कुछ अधिक कीमत देकर भी लोग खुशी से उनका तेल खरीदते थे। इसका कारण यह था कि उनके तेल के बारे में लोग पूर्वग्रहदूषित नहीं थे इस लिये इस तेल की शुद्धता के बारे में उन्हें जल्द यकीन होगया। पर यदि यह व्यवसाय पूर्णरूप से पुनरुज्जीवित करना हो और उसकी बुनियाद पक्की करनी हो तो वह पेशेदार तेलियों के हाथ से ही हो सकता है यह स्पष्ट है। इसलिये तेलियों को यह समझाने की सख्त जरूरत है कि उनको ग्राहकों में अपनी पैठ इस कदर जमानी चाहिये कि उनके तेल की शुद्धता के बारे में कभी कोई सशंकित न हो।

(ङ) घानी का काम जाननेवाले मिस्त्रियों की कमी

तिलहन संग्रह, बिक्री का इन्तजाम, मिलों से स्पर्धा आदि के कारण घानी की समस्या तो वैसे ही जटिल होगई है। प्रामाणिकता से घानी चलाकर ही निजी चरितार्थ निबाहने वाले तेली बहुत कम हैं पर एक घानी चालू रखकर उसकी ओट में मिल का तेल बेचने वाले तेलियों का प्रमाण अत्यधिक है। इस परिस्थिति के कारण घानी का काम करनेवाले मिस्त्रियों की रोजी छिन गई, क्योंकि जब कभी चलने वाली घानी में मरम्मत करने के मौके ही क्यों बार-बार आने लगे? फिर नई घानी बनाना तो दरकिनार रहा। इसलिये घानी का काम करनेवाले मिस्त्रियों की आमद गिर गई और यह काम सीखने का नई पीढी के लिये कोई प्रलोभन न रहा। इसलिये पुराने मिस्त्रियों की मौत के साथ ही साथ उनकी कला भी दफना दी गई। परिणामतः आज जो घानियां रखी हुई हैं उन्हें मरम्मत करने वाले मिस्त्री नहीं मिलते हैं इसलिये देश के कई स्थानों के तेलियों को योग्य समय में अपनी घानियों की मरम्मत करवाना संभव नहीं होता। इस प्रकार योग्य मिस्त्रियों का अभाव आज की घानी की अवनति का एक प्रधान कारण बन गया है। यदि घानियों को पुनरुज्जीवित करना हो तो मिस्त्रियों की शिक्षा इस कार्यक्रम का प्रधान अंग रहेगा।

योग्य समय पर मिस्त्रियों की सहायता न मिलने के अलावा तेलियों को घानी के छुट्टे भाग, योग्य भाव में और जरूरत पडने पर नहीं मिल सकते। कई स्थान ऐसे होते हैं जहां घानीके भागों के योग्य लकडी नहीं मिलती और कई

जीन और प्रेस महगे दाम देकर सारी लकडी जलाने के लिये खरीद लेते हैं और उस लकडी में घानी और उसके भाग बन सकने योग्य लकडिया होती हैं। इसलिये यह जरूरी है कि आवश्यक स्थानों पर घानी के भाग सग्रह किये जायँ ताकि जरूरत पडने पर तेलियों को वे योग्य दामों में मिल सकें। इस व्यवस्था से तेलियों की आवश्यकता की पूर्ति के साथ ही साथ पुरानी और अक्षम घानियों की जगह सुधरी हुई अधिक कार्यक्षम घानी बैठाने में भी काफी सहायता मिला करेगी। इस प्रकार घानिया और उनके भाग बनाने तथा उन्हें वितरित करने वाले केन्द्र ही नये घानी के मिस्त्री तैयार करने के उचित स्थान होंगे।

ये और ऐसी ही अन्य अडचनें दूर करने का काम एक अखिल भारत तेली सघ द्वारा ही ठीक तौर से हो सकेगा। सघ सारे देश की घानियों के प्रश्नों का विचार करेगा और उनकी नित्यप्रति की अडचनों से वाकिफ रहा करेगा। वर्तमान युग सगठन का है न कि यत्रों का, जैसा कि आमतौर से कहा जाता है। सगठन द्वारा कोई भी काम सफल और सुचारुरूप में किया जा सकता है। तेल की मिलें सगठित हैं इसलिये वे बाजी मार ले जाती हुई दीखती हैं। घानिया सगठित नहीं हैं इसीलिये उनकी दुर्दशा है।

९

२. प्रांतीय घानियाँ

१ घानी की क़िस्म और स्थानीय परिस्थिति

घानी की बनावट और उसे चलाने का तरीका इन दोनों को हमारे कारीगरों ने स्थानीय परिस्थिति के अनुकूल बनाया है। जहां वर्षा ज्यादा होती है वहां घानियां मकान के अन्दर लगानी पड़ती हैं और यह तभी संभव होता है जबकि वे छोटेसे दायरे में चलाई जा सकें। इसलिये पूर्व और उत्तर के भागों में एक बैलवाली घानियां प्रचलित हैं। मद्रास और उत्कल के कुछ भागों में जहां वर्षा कम होती है घानियां खुले मैदान में और दो बैलों द्वारा चलाई जाती हैं और बैल काफी बड़े चक्कर में घूमते हैं। इनमें से कुछ घानियां बहुत बड़ी हैं और घान में बहुत बड़े प्रमाण में तिलहन पेर सकती हैं।

घानियां छोटी या बड़ी बनाने का दूसरा एक कारण बैलों की क़िस्म भी है। सिंध और उत्कल को छोड़कर करीब सब जगह घानी खींचने का काम बैल ही करते हैं और वे जैसे कम या ज्यादह ताक़तवाले हों वैसी घानियां छोटी या बड़ी बनानी पड़ती हैं। सिंध में ऊँट और उत्कल में कभी-कभी भैंसे भी जोते जाते हैं। बैल और ऊँट फुर्तीले होते हैं, पर भैंसे तो बहुत सुस्त होते हैं। पंजाब, बंबई और मद्रास के बैल तगड़े होते हैं इसलिये वहां की घानियां भी बड़ी होती हैं। पर युक्तप्रांत, बिहार, आसाम, बंगाल, उत्कल और मध्यप्रांत के बैल कद में छोटे और ताक़त में कमहोते हैं इसलिये वहां की घानियां तुलनात्मक दृष्टि से छोटी हैं।

२ कारीगरों का संगठन

घानी बनानेवाले कारीगरों का जो संगठन होता है वह बड़े मार्के का है। घानी बनाना एक खास कला है और पुश्तैनी तौर पर वह किया जाता है। हरएक कारीगर अपने अपने दायरे में काम करता है और एक नियत कीमत में घानी बना देता है। इस क्षेत्र में दूसरा कोई कभी हस्तक्षेप न करेगा। ये बढ़ई इस व्यवसाय की परंपरा और उसके विभिन्न पहलुओं और समस्याओं से परिचित रहते हैं इसलिये भिन्न भिन्न स्थानों के तेलियों में संबंध प्रस्थापित करना इनके लिये बहुत आसान रहता है। वे अपना ज्ञान और अपनी अद्यावत् जानकारी का फायदा तेलियों को देते रहते हैं। इस समय यद्यपि वे केवल स्थानीय घानियां बनाना ही जानते हैं और यद्यपि उनकी संख्या बहुत कम हो

गई है फिर भी सशोधित घानियों का प्रचार करने मे उनका उपयाग कर लेना और उनकी परपरा और सगठन कायम रखना ही ठीक होगा।

यू तो यह सगठन अच्छा था, पर विभिन्न प्रान्तों का समन्वय करने का काम उसकी स्वाभाविक घटना में ही नहीं था। यदि ऐसी कोई सस्था होती तो विभिन्न प्रातों की घानियों मे जो फर्क और कमिया हैं वे न रह कर एक निश्चित तर्ज की घानी ईजाद होती जो अपने-अपने प्रात में आवश्यकतानुसार हेर फेर कर इस्तेमाल की जाती होती। उदाहरणार्थ, कई घानियों में निसनेवाले भाग अलग से बैठाये जाते हैं पर अन्यों में ऐसी कोई योजना नहीं। उनमे तो ओखली बने कुड को ही कोठे की तरह इस्तेमाल किया जाता है जिसका नतीजा यह होता है कि ओखली घिस जाने पर उसे निकाल कर फेंक देना पड़ता है। कोई-कोई घानियों में तेल निकालने के लिये मुहरी रहती है और अन्यों मे कपडे के टुकडों को डुबा डुबाकर और उसे किसी बर्तन मे निचोड़कर तेल निकालना पडता है। कुछ घानियां में कोठे की खली निकालने के लिये लाट उठानी पडती है और कुछ मे नहीं। इन सब फर्कों के अलावा घानियों की रचना के तफसील में भी फ़र्क़ रहता है। यह फर्क एक ही प्रात मे पास ही पास दिखाई देता है इसलिये वह स्थानीय परिस्थिति के कारण नहीं हो सकता।

३ अच्छी घानी के गुण

अब हम प्रचलित घानियों का एक अच्छी घानी के नीचे लिखे हुए गुण की कसौटी पर निरीक्षण करेंगे।

१ निलहन से निकलनेवाले तेल का प्रतिशत अधिक से अधिक होना चाहिये।

२ हर घान का परिमाण अधिक से अधिक होना चाहिये।

३ हरएक घान के पेरने में कम से कम समय लगना चाहिये।

४ आदमी और बैल की कम से कम शक्ति लगनी चाहिये।

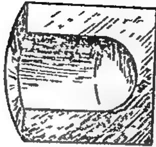
५ लागत और मरम्मत खर्च कम से कम होना चाहिये।

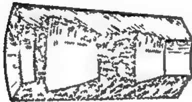
४ प्रातीय घानिया

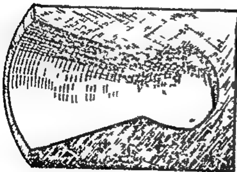
(अ) गुजराती घानी

गुण १, २, ३

दोष ४, ५





प्रान्तीय घानियों की फावड़ें

४ इसमें समेटनी के लिये कोई इतजाम नहीं है इसलिये हाथसे तिलहन कोठे में बार-बार सरकाना पडता है। परिणाम यह होता है कि एक आदमी एक समय में एक ही घानी सम्हाल सकता है।

५. घानी चलानेवाले तेली को बैठने के लिये जो चबूतरा बनाया जाता है उसमें व्यर्थ खर्च करना पड़ता है।

(अ) दक्षिण भारत की घानी

गुण १, २, ३

दोष ४, ५

४ बैलों के चलने का घेरा बहुत बडा होता है—क़रीब १२ से १८ फीट की त्रिज्या का—इसलिये एक तिलहन सरकाने के लिये और एक बैल हाकने के लिये ऐसे दो आदमियों की जरूरत पड़ती है।

बोझापाट काफी लंबा होने से ओखली के ऊपर उठता है। वह ऐसा न उठे इसलिये उसको घूमने के लिये ओखली में एक खाचा बनाया जाता है। इस खाचे में घूमते हुए बोझापाट काफी आवाज करता है जिस पर से यह सिद्ध होता है कि उसमें काफी रगड़ पैदा होती है और रगड पैदा होने का मतलब है बैलों को अधिक श्रम पडना।

इसमें तेल निकालने के लिये कोइ मुहरी नहीं होती।

५. ओखली के कोठे का बदले जासकने वाले हिस्से का नहीं बनाया जाता, बल्कि खुद ओखली में बने कुड का ही कोठे की तरह इस्तेमाल किया जाता है। नतीजा यह होता है कि इसे हर चौथे, पाचवे साल निकालकर फेंक देना पड़ता है और फेंकना जान पर आता है इसलिये उसकी कार्य-क्षमता कम होजाने पर भी कुछ समय तक और उससे काम लेने की प्रवृत्ति रहती है।

विदर्भ प्रांतीय घानी

गुण ५

दोष १, २, ३, ४

पाचवा गुण है पर पहले चार गुण न होने से उसका स्वतन्त्ररूप से कोइ महत्व नहीं है।

इसका कोठा तेल पेरने के किसी भी सिद्धांत के आधार पर नहीं बनाया

गया इसलिये तिलहन पर पर्याप्त दबाव नहीं पडता। कपड़े के टुकडो को डुबा डुबाकर तेल निकाला जाता है। बैल के लिये बडी कष्टप्रद है।

(ई) बगाली घानी (डायमड हार्बर की पद्धति की)

गुण एक आदमी एक साथ दो घानियों की देखरेख कर सकता है।

दोष सरसो और खोपरे के सिवा अन्य तिलहनों की पेराई के अनुकूल नहीं है।

२० सेर सरसों की एक घान पूरी होने के लिये ५ से ६ घटे तक समय लगता है। एक ही घानी में पाली-पाली से दो बैल जोतने पडते हैं, अर्थात् एक घानी के लिये दो बैलों की जरूरत पडती है। यदि घान का प्रमाण कुछ कम कर दिया जाय तो एक बैल से काम चल जाय। इसकी बनावट का मुख्य दोष यह है कि इसका कोठा बहुत ही छोटा रहता है जिससे पेराई के लिये अवकाश कम रहता है। लाट केवल ७° का कोण बनाती हुई घूमती रहती है इसलिये जो दबाव पडता है वह तली पर पडता है। वहा पेराई का कार्य नहीं होता इस लिये यह दबाव करीब-करीब व्यर्थ सा जाता है। यही कारण है कि घान पूरी होने के लिये इतना अधिक समय लगता है। इसकी ओखली में बदले जा सकने वाले भाग नहीं लगाये जाते। कोठा घिसने पर ओखली का उतना हिस्सा काट डालते हैं और नया कोठा बनाकर काम चालू करते हैं।

(उ) पजाबी घानी

गुण २, ४, ५

दोष १, ३

इसमें खली की मोटी तह बनती है इसलिये तिलहन पर पर्याप्त दबाव नहीं पडता।

यदि समेटनी की बनावट में थोडा फर्क किया जाय तो एक समय एक आदमी दो घानिया सम्हाल सकेगा।

(ऊ) मारवाडी घानी

गुण करीब सब (समेटनी तथा बोभापाट की बनावट को छोडकर)

इसके और गुजराती घानी के आधार पर मगनवाडी में घानी के प्रयोग किये गये है।

५ प्रान्तीय घानियों की कार्यक्षमता

अब हम हमारे पास आये हुए विवरणों पर से प्रान्तीय घानियों की क्षमता की एक सूचि देते हैं। मुकाबिले के लिये हमने तिल को लिया है क्योंकि यही एक ऐसी तिलहन है जो आमतौर से सब जगह पेरी जाती है।

स्थान	प्रांत	तिल पौंड में	तेल पौंड में	प्रतिशत	घान	घंटे
पन्ढरपूर	महाराष्ट्र	६२	२४	२६	४	८
भद्रक	उत्कल	४२	१३⅓	३१¾	३	६
बड़दगल	बंगाल	५०	१६	३२	[illegible]	८
छपरा	बिहार	३६	१२	३३⅓	६	१२
कुमिल्ला	बंगाल	५०	१७	३४	४	१२
चित्तूर	आन्ध्र	१०८	३७½	३४¾	७	८
बिजनौर	युक्तप्रांत	३८	१४	३६¾	४	१२
तिरुवन्नामलाई	तामिलनाड	१५१	५२½	३७½	५	८
जालंधर	पंजाब	४०	१५	३७½	२	७
भुसावल	खानदेश	४३½	१७¼	३९¾	३	१०
साबरमती	गुजरात	१००	४२½	४२½	५	८
राजकोट	काठियावाड	११२	४९	४३¾	[illegible]	१३
बंबई	बंबई	७२	३२	४४½	४	८
कडप्पा	आन्ध्र	९०	४२	४६⅔	३	११
कालीकट	मलबार	६२	३०	४८½	२	६
पीथापुरम	आन्ध्र	३६	१८	५०	१	१०

यह सूचि बताती है कि एक दिन में २२ से लेकर ५२½ पौंड तक तेल निकाला जा सकता है और तेल का पड़ता २६ से लेकर ५० प्रतिशत तक पड़ता है। इस पर से सारे देश में एकसी बढ़िया घानी चलाने की कितनी आवश्यकता है यह सिद्ध होता है।

अगर हमें विभिन्न घानियों की योग्यता की तुलना, तेल के एक निश्चित परिमाण के निकालने में पड़नेवाले खर्च के रूप में करनी हो तो हमें ज्यादा और गहराई में जाने की जरूरत है। इसके लिये बहरहाल मजदूरी की शरह, बैलों के

मिलाने का खर्च आदि सब घानियों के लिये एकसा ही है ऐसा हम मान लेंगे। इसी मान्यता के बूते पर नीचे एक सूचि दी जाती है, जो पिछली सूचि से हिसाब लगाकर तैयार की गई है।

स्थान	एक टन तेल के लिये जरूरी तिलहन (पौंड में)	पेराई खर्च (रुपयों में)	पेरने के लिये लगनेवाले दिन	प्रतिदिन ८ घंटे में निकलनेवालातेल (पौंड में)
पंढरपुर	८५८७	१२७–१४–०	६३	२४
भद्रक	७१६८	२७६–२–०	२०३	१११
बड़दगल	७०००	१६२–८–०	१४०	१६
छपरा	६७२०	३८५–०–०	२८०	८
कुमिल्ला	६५८८	२७२–४–०	१६८	११३
चितूर	६४५१	१०५–०–०	६०	३७५
बिजनौर	६०८०	३३०–०–०	१४०	६३
तिरुवन्नामलाई	६०१६	८४–०–०	४२	५१५
जालंधर	५६७४	१८१–८–०	१३२	१०१
भुसावल	५६८८	२२०–०–०	१६०	१३८
साबरमती	५२७०	७२-१४-०	५२	४२५
राजकोट	५१२०	१०३–२–०	७५	३०
बंबई	५०४०	६६–४–०	७०	३२
कडप्पा	४८००	१४४–०–०	७२	३०८
कालीकट	४६३०	१६८–०–०	८४	२६६
पीथापुरम्	४४८०	२११ १२-०	१५४	१४४

ऊपर की सूची में युद्ध-पूर्व पेराइ का खर्च इस तरह लगाया गया है

तेली की तनख्वाह	रु० १५	माहवार
बैल की खुराक	रु० १०	,,
घानी और बैल की छीजन	रु० ४	,,
मकान किराया	रु० २	,,
ब्याज इत्यादि	रु० ३	,,
कुल रु०	३४	,,

हर महीने के काम के दिन यदि २५ माने जायँ तो रोजाना पेराइ का खर्च रु० १-६-० होगा।

दाक्षिण में यह करीब रु० २ पटता है क्योंकि वहाँ एक घानी के लिये दो आदमी और दो बैल लगते हैं। चूँकि वहाँ की घानियों में काफ़ी तिलहन भरा जाता है, इसलिये उनमें रोजाना तेल भी काफी निकलता है। राजकोट जैसे कुछ स्थानों में एक ही घानी दो बैल पाली पाली से खींचते हैं और इस प्रकार १३ से १४ घटे काम कर रोजाना अधिक तेल पैदा करते हैं। तेल के प्रतिशत की दृष्टि से कडप्पा कालीकट और पीथापुरम् की घानिया श्रेष्ठ मालूम पडती हैं। इतना अधिक प्रतिशत दो कारणों से सभवनीय है, एक तो वहा की तिलहन में तेल का अश खूब होना और दूसरा हमें भेजे गये आकडों मे कुछ गल्ती होना। तेल के नीचे जमनेवाली गाद का यदि विचार न किया गया हो तो ऐसी गल्ती होना असभव नहीं।

प्रातीय घानियों का अभ्यास और कुछ प्रयोगों के बाद अखिल भारत ग्राम उद्योग सघ के प्रधान कार्यालय में मगनवाडी घानी बनाइ गइ है जिसकी कार्यक्षमता नीचे दियेनुसार है —

६ मगनवाडी घानी की कार्यक्षमता

तिलहन	प्रतिघान में कितनी तिलहन पडती है (पौंड में)	तेल का प्रतिशत	प्रतिघान में लगनेवाला समय (घटों में)
तिली	१७	४५	१¼ से १½
मूगफली	१७	४५	१
खोपरा	२०	५५ से ६०	¾ से १
अलसी	१२	३२ से ३५	१½
राइ	१६	३०	१¼
सरसों	१६	३५ से ४०	१¼ से १½
महुआ	१६	३५	¾
अरडी	१८	४०	१

पीछे दी हुइ न० २ की सूचि के मुताबिक दो मगनवाडी घानियों की इकाइ पर एक टन तिली का तेल पेरने का खर्च रु० ५३-०-० के करीब आता है। यह हिसाब करते समय प्रतिदिन का खर्च रु० १-१२-० कूता गया है। क्योंकि

उन दोनों [illegible] किसान [illegible] १–२०० में [illegible] के मुकाबले दूसरे देश का [illegible] रु० ०–२०० अधिक रहता है।

दो [illegible] की [illegible] का किसी देश का [illegible] का [illegible] (क) में दिया गया है [illegible] के द्वारा [illegible] आमदनी किस [illegible] हो सकती है इसको [illegible] जायगी।

३. घानी की रचना के सिद्धांत

घानी के प्रमुख भागों के नाम तथा उनका वर्णन नीचे दिया जा रहा है।

१ ओखली (कुंड और मुंदरी के साथ)
२ कोठा
३ लाट
४ समेटनी
५ नाकड़ी
६ बोझापाट

१ ओखली

(अ) लकड़ी की किस्म

ओखली की लकड़ी मजबूत, भारी, ठोस और तेल को न रंगनेवाली होनी चाहिये। यह मिलने में आसान तथा पानी खाई हुई होनी चाहिये। अगर लकड़ी मजबूत न हो तो लाट के भारी दबाव से टूट जायगी। अगर यह भारी न हो तो लाट के वजन से उलट जायगी, अगर यह ठोस न हो तो तेल रस जायगा और अगर तेल को रंग देती है, तो तेल खराब हो जायगा। इसलिये किसी भी तरह की लकड़ी घानी की ओखली के लिये काम नहीं दे सकती। इसके अतिरिक्त घानी बनाने के लिये जितने चौड़े तने के पेड़ की जरूरत होती है, वे बहुत थोड़े और कहीं कहीं पाये जाते हैं। आजकल घानी की ओखली बनाने के लिये आमतौर पर इमली, नीम, कटहल, बेरा और शिरीष की लकड़ी काम में लाते हैं। कभी कभी खयन, महुआ, आजन और बबूल भी काम में लाते हैं, पर ये चटक जाने का डर रहता है। इमली की लकड़ी भारतवर्ष के बहुत हिस्सों में इस्तेमाल होती है। नीम खानदेश, गुजरात और बिहार में और शिरीष की लकड़ी मध्यप्रांत में इस्तेमाल होती है। इसके अलावा इस काम के लिये शायद कुछ और लकड़ियां भी मिल सकती हैं, जो इस काम के लिये अच्छी साबित हों, पर बढ़ई लोग तो यह मान बैठे मालूम पड़ते हैं कि इनके सिवा और कोई लकड़ी हो ही नहीं सकती। पर अच्छा हो कि किसी नई लकड़ी

का पता लगाने के पहले वेकार पडी मौजूदा घानियों का ही उपयोग किया जाय, क्योंकि वे अच्छी तरह तेल पी चुकी हैं और उनसे काफी पैसे और मजदूरी की बचत हो जायगी बशर्ते कि वे इष्ट आकार की और चटकी हुई न हों।

(आ) नाप

ओखली जमीन के ऊपर इतनी ऊँची चाहिए कि उस पर काम करनेवाले को ज्यादह न झुकना पडे। साथ ही कोठे की दलुआ मुहरी के लिये भी काफी ऊँचाई की जरूरत है। इस प्रकार यह जमीन से कोई २½ फीट ऊँची होनी चाहिये और ताकि यह लाट के घूमने से पडनेवाला वजन और उनके विभिन्न दायरे में घूमनेवाले बोझावाट का वजन बरदास्त करसके इसलिये कोई ३ फीट जमीन के अन्दर भी गडी हुई होनी चाहिये। इस प्रकार कुल लंबाई ५½ फीट हुई। पर जहां की जमीन रेतीली हो वहां इससे भी अधिक लंबाई चाहिये। जहां तक हो सके लकडी बिलकुल सीधी हो।

कभी कभी ५½ फीट लंबाई की मिलना मुश्किल होता है। ऐसी हालत में नीचे की ओर कुछ बडी खूटियां या गुणाकार बड़ी जोडी जा सकती है।

ओखली का घेरा इतना होना चाहिये कि कोठे का कुंड बनाने के बाद भी दीवारें मजबूती के ख्याल से काफी मोटी रह जायँ। तिलहन भरने के लिये भी जगह होनी चाहिये। चटक जाने की संभावना न रहे इसलिय भी घेरा एक विशेष हद का अवश्य चाहिये। इसलिये वह करीब २½ फीट तो अवश्य ही चाहिये। अगर लकडी का घेर इससे कम हो तो और लकडी जोडकर इतनी जगह बना लेनी चाहिये। ऐसी लकडी जोडने के बाद घेरे के बाहरी तरफ लोहे का पहिया लगा लेना अच्छा होगा, जिससे काफी मजबूती आजायगी।

(इ) मुहरी

यह कुंड की तली में एक तरफ खोदी जाती है और दूसरी तरफ जमीन के पास आ निकलती है। अगर लकडी अच्छी न हो तो जस्त का एक नल लगा देते हैं जिससे तेल न रसने के लिये काफी इन्तजाम हो जाता है। मुहरी जमीन की सतह के बहुत नीचे जाकर नहीं निकलनी चाहिये, क्योंकि उस हालत में तेल का बर्तन रखने का गड्ढा बहुत गहरा बनाना पडेगा। अगर यह गड्ढा गहरा रखा जाय तो तेल भरे बर्तन को निकालने में दिक्कत पड़ेगी और मुहरी को

साफ करने के लिये डके का डालना भी मुश्किल होगा। यह मुहरी कोठे का कुंड बन जाने के बाद अंदर से बनाई जाती है ताकि वह ठीक जगह पर बनाई जा सके।

मुहरी को बंद करने के लिये जो लोहे का डका डाला जाता है उसका मुँह ऐसा होना चाहिये कि वह मुहरी में बिलकुल ठीक बैठे।

२ कोठा

कोठा, घानी का वह हिस्सा है, जहां लाट तिलहन पेरती है। यह घानी का बड़ा महत्वपूर्ण भाग है। तेल निकलने का प्रतिशत, रोजाना निकलनेवाले तेल का परिमाण, हर घान में लगनेवाला समय आदि सभी बातें खासकर इस कोठे की बनावट पर ही निर्भर करती हैं। विभिन्न घानियों से निकलनेवाले तेल के परिमाण का अन्तर उनकी बाहरी बनावट के कारण इतना नहीं होता, जितना कोठों की बनावट की विभिन्नता के कारण होता है। यह बदले जा सकनेवाले तख्तों का बनाया जाता है। जिसे कोठे की बनावट का कुछ भी ज्ञान नहीं है उसे तो पंजाबी और मारवाड़ी घानियाँ एकसी ही मालूम पड़ेंगी।

(अ) लाटका चुनाव

कोठे की बनावट में सबसे बड़ी बात यह है कि कोठा और लाट को इस हिसाब से बनाया जाना चाहिये कि तिलहन ठीक तौर पर पेरा जाय और तेल आसानी से बाहर निकल सके।

इसके लिये पहली शर्त यह है कि लाट कोठे में अधिक झुकाव से घूमे, क्योंकि जितना ही अधिक झुकाव होगा, कोठे की बाजुओं पर का दबाव भी उतना ही अधिक पड़ेगा।

लाट द्वारा कोठे की तली पर जो दबाव पड़ता है उसके कारण कोठे में उष्णता पैदा होती है जो तेल पेराई में सहायक होती है और कोठे की बाजुओं पर का दबाव तिलहन को पीसकर निचोड़ता है। ये दोनों दबाव लाट के झुकाव के अनुसार कम ज्यादा होते हैं, अर्थात् यदि झुकाव ज्यादा हुआ तो कोठे की तली पर का दबाव कम होगा और बाजुओं पर का दबाव बढ़ जायगा, पर यदि झुकाव कम हुआ तो कोठे की तली पर का दबाव बढ़ जायेगा और बाजुओं पर का दबाव कम हो जायगा।

जितना हम लाट का झुकाव अधिक रखेंगे उतनी ही कोठे की गहराई कम और चौड़ाई ज्यादा रखनी होगी। पर यह भी हम अमुक एक हद तक ही

कर सकते हैं क्योंकि कोठा चौडा बनाने में एक तो उसका मिकदार घट जायगा और घानी के लिये अधिक चौड़े तने की लकड़ी की आवश्यकता होगी जो आमतौर से करीब करीब अप्राप्य होती है।

लाट का योग्य झुकाव निश्चित करने के लिये हम यह भी देखना चाहिये कि लाट का आडा दबाव इतना नहीं बढ जाना चाहिये कि वह कोठे में की खली को काठे की दीवार के सहारे पूर्ण रीति से पेरी गये बिना ही बाहर फेंक दे। हमारा अनुभव यह है कि झुकाव २२° पर पहुँचते ही उपर्युक्त असर होने लगता है। इसलिये ऐसा मालूम पड़ता है कि २०° और २२° के अंदर तक का झुकाव फायदेमंद है।

(आ) खली की मोटाई

हमने ऊपर देखा कि दबाव को असरकारक बनाने के लिये लाट का झुका रहना जरूरी है, पर इतना ही काफी नहीं। झुकने के सिवा उसे कोठे की दीवार पर कम से कम जगह छोडकर घूमना चाहिये। यदि इनके बीच में अनावश्यक जगह रहने लगे तो दबाव कम हो जायगा। खली इसी खाली जगह के अनुसार बनती है और अगर वह मोटी बनी है तो उसकी पेराई में काफी समय लगेगा और तेल का प्रतिशत भी कम रहेगा। इसलिये अधिक से अधिक तेल प्राप्त करने के लिये कोठे की दीवार ऐसी चाहिये जो बिना अधिक खाली जगह छोड़े लाट के झुकाव के साथ मिल जाय।

अगर हम लाट और दीवार के बीच में अधिक जगह नहीं छोडना चाहते, तो दीवार ऊपर से लेकर कुछ गहराइ तक सिमिटती सी होनी चाहिये और फिर कोठे के निचले हिस्से तक बिखरती सी होनी चाहिये। अर्थात् कोठे की दीवार का ढलाव लाट के ढलाव के अनुसार होना चाहिये। दीवार का कुछ दूरी तक सिमटना और बाद में बिखरना इसलिये जरूरी है कि उस खास स्थान से लाट कोठे की सामनेवाली दीवार को छूती है। इस तरह कोठा दो हिस्सों में बँट जाता है, जिसके विपरीत ढलाव ऐसे बिंदु पर मिलते हैं, जिससे एक तंग गोल गरदन सी बन जाती है।

इस प्रकार कोठे की दीवार को सिमटती सी बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि कहीं यह गर्दन ज्यादह तंग न हो जाय। यह इतनी चौडी होनी चाहिये कि जरूरी मोटी लाट नीचे जा सके। यदि लाट का वह हिस्सा

बहुत पतली होगा तो वह तली म और गरदन के नीचे की दीवार पर खाली जगह छोड देगी। नतीजा यह होगा कि उस दीवार पर मोटी खली बनेगी, और अगर तिलहन नीचे बैठ गया तो कभी कभी लाट बाहर भी निकल आवेगी।

गरदन के नीचे की दीवार इतनी ऊची भी नहीं होनी चाहिये कि उनके और लाट के बीच मे बहुत जगह खाली रहे। ऐसा होने से उसके पास मोटी खली जमती जावेगी। और उसे निकालने के लिये लाट को बाहर निकालना पड़ेगा। यह दीवार छोटी रखने से खली को कोठे में नीचे से ऊपर की ओर घूमने में भी सहायता होगी। लेकिन चूँ कि यह भाग ऐसा है जिसमें अधिक से अधिक दबाव पडता है इसलिये उपर्युक्त मर्यादाओं को सम्हालकर वह यथासभव ऊचा रखना अभीष्ट है।

लाट का निचला सिरा कुछ फूला हुआ रखने से उपर्युक्त मकसद अच्छी तरह पूरा हो जाता है। इस आकार के कारण कोठे के निचले भाग म बहुत पतली खली जमती है। इस खली को हरएक घान के बाद निकालने की जरूरत नहीं रहती क्योंकि नया तिलहन डालने पर वह आप ही आप ऊपर उठ आती है और तिलहन मे मिल जाती है। चूँ कि इसका प्रमाण बहुत छोटा होता है इसलिये नये घान की मिकदार पर इसका कोई असर नहीं होता।

हर घान के बाद लाट बाहर निकालने का झंझट बचने से मतलब म हर घान के बाद बैल खोलने की भी जरूरत नही रही। लेकिन दो घान के बीच में बैल को थोडा आराम देना और उसकी गरदन पर से जुआ उतारना अच्छा है। जुआ खाध पर लगातार रहने से गरदन तपती है और सूजती है। इस प्रकार मिहनत का काम हट जाने से अब घानी चलाना यानी उसके ऊपर फकत निगरानी रखना है। यह काम हलका होने से घर की स्त्रिया या जिन्हें कडी मिहनत का काम करने की आदत नहीं ऐसे लोग भी अब घानी चला सकेंगे।

(ड) खली का कोठे मे घूमना

कोठे के नीचे, मध्य और ऊपर के हिस्से की खली का परीक्षण करने से पता चलता है कि लाट का दबाव कोठे की दीवारों पर असमान रूप से बट जाता है।

इससे सिद्ध होता है कि खली कोठे के अन्दर घूमनी चाहिये। अगर

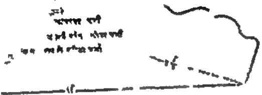
तेल के पेरने में समय की बचत करनी हो तो कोठे में खली को अधिक से अधिक तेज़ी से घूमना चाहिये। अगर उसकी घूमने की रफ्तार कम रही तो वह एक ही जगह रहकर पिरेगी और घान के खत्म होने में बहुत समय लग जायगा। क्योंकि खली का वह हिस्सा जहाँ दबाव अधिक से अधिक है, जल्दी पिर जायगा और जहां दबाव कम है, वह देर में। इसलिये यदि खली जल्दी जल्दी घूमती रहे तो उसका हरएक हिस्सा अधिक से अधिक दबाव की जगह आता है और खली भी उलट जाती है, यानी दीवार से लगा हिस्सा उलटते उलटते लाट की तरफ आ जाता है। खली के घूमने की रफ्तार कोठे की बनावट पर निर्भर करती है। उसकी दिशा नीचे से ऊपर की तरफ होती है इसलिये इसमें अगर कोई चीज़ बाधा डाल सकती है तो वह गर्दन है। अगर गर्दन के नीचे की दीवार में ढलाव ज्यादा हो तो खली आसानी से ऊपर नहीं आती। इसलिए कोठे की तली का व्यास उसकी गर्दन के व्यास से २" से अधिक न हो। साथ ही तली का घेरा इतना बड़ा होना चाहिये कि लाट आसानी से झुक सके। अर्थात् कोठे की तली का घेरा और गर्दन ये दोनों एक निश्चित प्रमाण में बड़े होने चाहिये। गर्दन की बहुत तेज धार नहीं रखनी चाहिये। दोनों बाजुओं के ढाल में गोलाई देकर उन्हें मिला देना चाहिये।

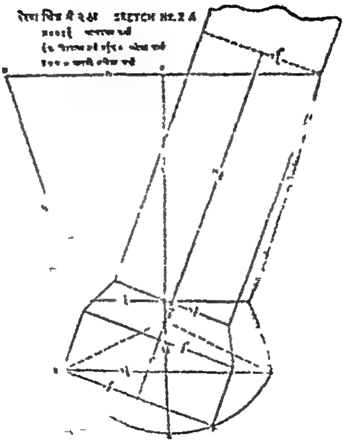
(ई) तली में ढलाव

यदि कोठे की तली सपाट रखी जाय तो चूँकि लाट कुछ झुकाव में घूमती रहती है इसलिये उसके और तली के बीच में कुछ जगह छूट जाया करेगी और इसमें तिलहन भरा रहा करेगा। इस प्रकार यदि तिलहन भरा रहे तो मुहरी का मुँह बन्द हो जायगा और लाट बाहर निकला करेगी जिससे लाट हटाकर खाली जगह पर जमी हुई तिलहन हटाना लाजिमी हो जावेगा। इसलिये कोठे और लाट की तलियों में कतई जगह न छूटने देना नितांत आवश्यक है और इसके लिये दोनों का ढलाव समान परिधि का रखना चाहिये। रेखाचित्र नं० २ कालम ८ में दर्शाये मुताबिक दोनों के लिये एक ही वृत्तखंड खींचने से यह आसानी से हो सकता है।

(उ) की घान का परिमाण

घान के परिमाण को घटाने बढ़ाने के लिये कोठे की गहराई और





एप, भेजा जाता है।

चौडाइ कम ज्यादा करनी चाहिये। पर ऐसा करते समय बैल की शक्ति का भी खयाल रखना चाहिये। एक मामूली बैल के लिये १८ पौंड तिली का घान ठीक होता है।

दूसरी बात यह भी है कि घान बहुत बडा होने से तेल का उत्पादन हमेशा बढता ही है सो बात नहा है। यह तो भी घान को लगने वाले समय पर निर्भर रहता है।

कोठे का चित्र कैसे बनाना

(रेखाचित्र नं० २)

इस रेखाचित्र में दो भिन्न मिक्दारों के कोठा के चित्र दिये गये हैं। मगनवाडी में किये गये प्रयोग इनकी बुनियाद है और मगनवाडी घानियों में इसी नाप के कोठे बनाये जाते हैं। बडा कोठा 'अ' मामूली मजबूत बैल के लिये है और कोठा 'ब' कमजोर बैल के लिये है। दोनों में प्रतिघान कितनी तिलहन पडेगी यह जानने के लिये छठा प्रकरण देखिये।

इस रेखाचित्र में दिये नाप और गोलाइयां केवल अनुभवसिद्ध हैं, गणित के हिसाब का उन्हें कोइ आधार नहीं है। नीचे दिये हुए वर्णन में उपस्थान कोठे का वह ऊपरी हिस्सा है जिसपर लाट घूमते समय टिकती है, गर्दन कोठे की सिकुडन का हिस्सा है और खाचा (socket) कोठे का निचला हिस्सा है। यह रेखाचित्र पूरे नाप का दिखाया गया है ताकि चौथे प्रकरण में वर्णित पाचर और लाट के फर्मे बनाने में बढइयों को आसानी हो।

१ 'नक' में से कोठे का लंब अक्ष खींचिये।

१ इस अक्ष पर गर्दन और खाचे की गहराई दर्शाइये।

३ उप[illegible]स्थान, गर्दन और खाचे के स्थानों में से उस उस स्थान पर की कोठे की च[illegible] जितनी आडी लकीरें खींचिये।

[illegible] 'ड' और 'ईड' को जोड दीजिये। इसी प्रकार दूसरे छोर भी मिलाइये।

५ अब उपस्थान का केंद्र मानकर उस स्थान पर जितना व्यास हो उसकी आधी त्रिज्या से एक वृत्तखंड खींचिये। इसी प्रकार 'ड' को केंद्र मानकर नीचे की ओर लाट का जितना व्यास होता है उसकी आधी त्रिज्या से एक दूसरा वृत्तखंड खींचिये।

६ अब इन दोनों वृत्तखंडों के सामान्य ऐसी स्पर्श रेखा खींचिये। यह स्पर्श रेखा लाट की धुरी होगी।

७ कोठे की और लाट की धुराओं का छेदन बिंदु दर्शाइये।

८ इस छेदन बिंदु को केंद्र मानकर खाचे के छोर तक की त्रिज्या लेकर खाच के दोनों छोरों को जोड़नेवाला एक वृत्तखंड खींचिये। चूँकि यह वृत्तखंड कोठा और लाट की धुरा को सामान्य ऐसे केंद्र से खींचा गया है, इसलिये यह कोठा और लाट की सामान्य तनी दर्शाता है।

९ अब 'ड' को केंद्र मानकर और लाट के निचले सिरे के व्यास के बराबर त्रिज्या लेकर उपर्युक्त वृत्तखंड को 'ग' में छेदिये।

१० 'ड' और 'ग' से लाट की धुरी का सामानातर रेखाएँ खींचिये। गर्दन और खाच (socket line) के बीच में कोठे की धुरी जितनी पड़ती है उससे ¼" कम अंतर तक इन रेखाओं को उठाइये। उपर्युक्त सामानान्तर रेखाओं के दोनों छोर मिला दीजिये।

११ इन छोरों को जोड़नेवाली रेखा को सामानान्तर और 1¾" के फासले पर एक दूसरी रेखा खींचिये। इस रेखा की चौड़ाई उपस्थान में लाट का जितना व्यास रखना है उतनी ही रहे और लाट के धुरे के दोनों ओर एक सा अंतर रहे। इन दोनों रेखाओं के छोर जोड़ दीजिये।

१२ उपर्युक्त रेखा के एक छोर को उपस्थान से जोड़ दीजिये। दूसरे छोर में से लटकी धुरी के सामानान्तर एक रेखा खींचिये।

१३ लाट और कोठे की बाजुओं में आवश्यक जगह छोड़कर गोलाइयाँ बना लीजिये।

३

लाट की लकड़ी,	की लकड़ी की तरह ऐसी होनी	
चाहिये जिसका रेशा न	, इमली,	ऐसी
लकड़ियाँ हैं, पर आमतौर	लकड़ी	है।
की लकड़ी भी	, पर	। अगर
लनी हो तो	अदला	, पर
के मामले में		
या		

तेल की पेराइ में लाट की गराइ का काफी हाथ होता है, क्योंकि लंबाई से उत्थानन का लाभ मिलता है। तराजू की डंडी की तरह लाट भी दो हिस्सों में बट जाती है और कोठे का उपरी किनारा इसका उपस्थान होता है। यह इतनी लंबी न होनी चाहिये कि जब कोठे से बाहर निकाली जाय तब निकालने वाले आदमी से सम्हल ही न सके। साथ ही जिस मकान में घानी चल रही हो, उसकी छत की ऊंचाइ का भी ध्यान होना चाहिये। पर जहां नहीं हो सके और घानी खुली जगह में चलाई जाये, जैसा कि दक्षिण और उत्कल में होता है, वहां उत्थालन के कायदे से लाभ उठाया जा सकता है। इस ख्याल से लाट १० फीट लंबी रखनी चाहिये। पर यह बहुत भारी न हो जाय इसलिये जहां तक हो सके इसे उपस्थान भाग के ऊपर पतली ही, याने करीब ८ इंच व्यास की, रखनी चाहिये।

घूमते समय लाट बिना धचकों के चलनी चाहिये, नहीं तो खोकड़ी के उलट जाने का अंदेशा रहता है। इसलिये लाट के दोनों सिरे और उपस्थान भाग एक सीधी रेखा में होने चाहिये और लाट का उपस्थान पर का घेरा भी एकसा याने एक से अर्ध व्यास का होना चाहिये। खराद पर लाट तैयार करने से ये सारी बातें आप ही आप हो जाती हैं।

लाठ के ऊपरी सिरे के सिवे नुकीली होने के सिवा किसी खास आकार या शक्ल की जरूरत नहीं। यह नोक करीब १½" व्यास की रहती है लाट के उपस्थान भाग के नीचे ही उसमें कुछ आकार और नाप करना पड़ता है। पहली बात तो यह है कि लाट में उपस्थान के ऊपर बनाया जाने वाला खाँचा उपस्थान से करीब चार इंच ऊपर होना चाहिये। अगर यह कोठे से छू जाता है तो यह कोठे के बाहर लगी हुइ रस्सी को दबा देगा और हर बार उसे वहां से निकालना पड़ेगा। अगर यह खाँचा कोठे के ऊपरी हिस्से पर ठहरता है, तो लाट दीवार पर न घूमकर फिसल जाया करेगी। लाट का खाँचा उसे जरूरत के समय बाहर निकालने में सहायता देता है। इसके ऊपर एक छोटी खूंटी जड़ देना चाहिये जिस से लाट निकालने में और भी आसानी होगी।

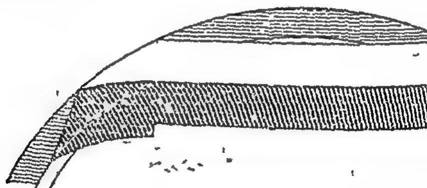
अगर लाट को काफी बड़े कोण पर झुकाना है तो या तो लाट उपस्थान भाग पर पतली बनानी चाहिये या कोठे का ऊपरी घेरा चौड़ा करना चाहिये।

४ समेटनी

तिलहन को कोठे में समेटने रहने के लिए समेटनी एक युक्ति है। इसमें तिलहन स्वयं ही समेटने की योजना होने के कारण आदमी एक साथ सरलता से दो घानियों की और एक बच्चे की सहायता से तो तीन घानियों की देखरेख कर सकता है।

समेटनी कोठे पर लाट के आगे घूमती है। खम्भ से एक द्वारा यह लटकाई जाती है। यहाँ वह खम्भ से बाँध दी जाती और तिलहन को ढकेलने के लिये काफ़ी जोर देने की गरज से इ क़रीब १० सेर का बोझ लटका दिया जाता है।

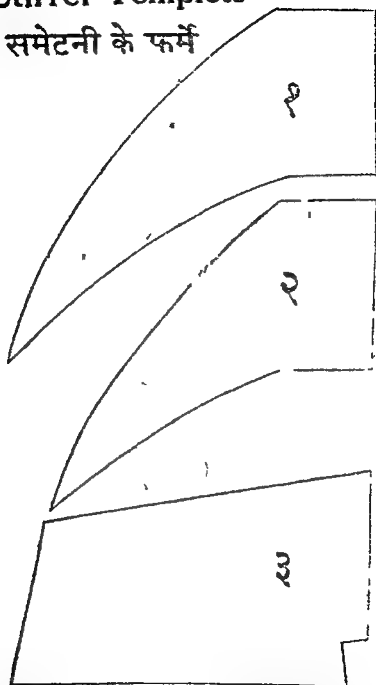
इसका वह सिरा जो ओखली की दीवार पर घूमता है दीवार तरह का नोकदार होना चाहिये, ताकि वह बिना रगड़ के घूम अर्थात् समेटनी के बाहर के बाजू की गोलाई समेटनी के साँचे की की गोलाई जैसी ही चाहिये।



समेटनी का एक सिरा तो खम्भ से बंधा रहता है और साँचे की दीवार पर से गुज़रकर साँचे में घूमता रहता है। अर्थात् वह सीधा नहीं घूमता है पर एक कोण बनाता हुआ घूमता है। इसका परि यह होता है कि समेटनी की समूची बाह्य गोलाई साँचे की दीवा स्पर्श नहीं करती, उसका सिर्फ़ ऊपरी कोण ही स्पर्श करता है जि समेटनी की गोलाई में और साँचे की दीवार में कुछ जगह छूट जाती साँचे में समेटनी एक कोण बनाकर घूमने के कारण साँचे की तली समेटनी की तली में भी सामने की थोड़ी सी नोक को छोड़कर,

Stirrer Templets

समेटनी के फर्मे



Sketch no. 3 रेखा चित्र नं. ३

पूरे नाप का यह रेखाचित्र किताब के साथ भेजा जाता है।

छूट जाती है। ये खाली जगह तिलहन से भरी रह जाती है और समेटना का कोई उपयोग नहीं होता। इस लिये समेटनी और खाने की दीवार में तथा समेटनी और खांचे की तली में कहां भी खाली जगह न छूटे इसकी फिक्र करना निहायत जरूरी है। अर्थात् समेटनी की गोलाई खांचे की गोलाई में और उसकी तली खांचे की तली में बिलकुल मिल जानी चाहिये। इसके लिये समेटनी की गोलाई को ऊपर से छांटना चाहिये। दूसरे शब्दों में यह बाजू ऊपर से नीचे की ओर ढाल में छांटना चाहिये और ऊपर का सिरा क़रीब ¼" कम चौड़ा कर देना चाहिये। अर्थात् इसका निश्चित प्रमाण तो समेटनी खम्भ पर कितनी ऊंची बांधी गई है इस पर अवलंबित रहेगा। तली में की खाली जगह को टालने के लिये इसे भी सामने से केन्द्र की ओर करीब ¼" ढलुआ बनानी चाहिये। गोलाई की नीचे और ऊपर की चौड़ाई तथा समेटनी की तली में ढाल रेखाचित्र न० ३ में अनुक्रम से फ़िग न० १, २ और ३ में दिखाया गया है।

४ बाकड़ी

४ लाट पर दबाव डालनेवाले बेंकापाट का बोझ एक बांकड़ी पर लटकाया जाता है। यह बांकड़ी लाट के सहारे घूमती है। यह काफी मजबूत होनी चाहिये, क्योंकि इसमें काफी भारी बोझ लटकाया जाता है। इसके लिये कोई भी मामूली मोटी लकड़ी काम दे सकती है पर अगर वह जल्दी ही खराब होनेवाली हो तो बार बार बदलनी पड़ेगी। इसलिये बबूल की लकड़ी ही ठीक होती है।

इसका लाट के साथ बननेवाला कोण यह स्वयम् किस कोण में झुकी हुई है इस पर अवलंबित रहेगा। क्योंकि ये दोनों कोण, तीसरा खंभा का जमीन से बननेवाला समकोण और लाट का कोठे से बननेवाला चौथा कोण ये चार मिलकर चौकोन तैयार होता है और चारों कोण मिलकर ३६०° होते हैं। इन चारों में से तीसरा समकोण निश्चित है और चौथा भी निश्चित सा ही है क्योंकि वह लाट और कोठे की धुराओं से बनने वाले कोण का पूरक है (देखिये रेखाचित्र न० २)। बचे हुए दो कोणों में हेर फेर हो सकता है। यदि बांकड़ी का कोण मालूम हो तो हम उसका लाट से बननेवाला कोण निकाल सकते हैं। उदाहरणार्थ, यदि हम इन कोणों को

'a' कोण का पूरक
= कोण 'b'—लाट की धुरा और कोठे की धुरा के बीचका कोण
= कोण 'b'—२१°

जहा तक हो सके, जरूरी बाँकवाली एक ही लकडी काम में लानी चाहिये जिस से मजबूती काफ़ी हो जाती है। अगर इतनी लबी और बाँकवाली लकडी न मिले, तो एक छोटी सी बाँकदार लकडी को दूसरे टुकडे में जोड़कर लबाई पूरी कर लेनी चाहिये। जोड लगाकर बाँक भी बनाया जा सकता है। अगर लाट लबी रखी जाय तो कभी कभी ऐसे जोड़ लगाने पड़ते हैं।

बाँकडी पर लटकनेवाला बोझ काफ़ी होता है, इसलिये लाटकी नोक और रोकडी के गड्ढे में काफी रगड होती है। इसे कम करने के लिये इस गड्ढे म थोड़ा सा साबुन रख देना चाहिये।

६ बोझापाट

बैल पर पडनेवाला बोझ खासकर बोझापाट का बनावट पर ही निर्भर होता है। इसकी लम्बाइ, जुए की योजना, ओरहली के साथ होनेवाली रगड आदि बातें बैल पर पडनेवाले बोझ घटाने या बढाने का काम करती हैं। अगर इस सब दृष्टि से बोझापाट सन्तोषजनक बनता है, तो बैल के लिये तिलहन करीब ४½ मन का जरूरी दबाव डालनेवाले भारी बोझ का खींचना आसान हो जाता है।

बोझापाट दो काम करता है।

(१) लाट के ऊपरी सिरे पर दबाव डालने के लिये के लिये आवश्यक बोझ सहना।

(२) यह उच्चालन का काम करता है। इसका एक सिरा एक रस्सियों से बैल के साथ बंधा रहता है। यह बैल ही इसकी खींचने की शक्ति है। इसका ओरहली के सहारे घूमता रहता भाग उपस्थान बन जाता है, और दूसरे पर जुआ लगायाजाता है। इसमें लगा हुआ खभ जो लाट के ऊपरी सिरे जोड़ा जाता है और जो लाट को आवश्यक गति देता है वही लाट की तमाम प्रतिरोध शक्ति सहन करता है।

(अ) उच्चालन और गति

नोभापाट जितना ही अधिक लम्बा होगा, बैल को उसके खींचने में उतनी ही सहूलियत होगी, क्योंकि लम्बाई से उच्चालन लाभ मिल जाता है। पर साथ ही इससे बैल के घूमने का दायरा भी बढ़ जाता है। इसका मतलब यह हुआ कि उच्चालन लाभ के लिये हम गति खो बैठते हैं जिससे की घान का समय बढ़ जाता है। इसलिये बैल के घूमने के घेरे और उच्चालन लाभ का ठीक से समन्वय करना पड़ेगा। इसके अलावा घानी जिस मकान में चलाई जानेवाली हो उसकी चौड़ाई का भी ख्याल करना होगा। इस तरह यह पता चलता है कि नोभापाट को इतना लम्बा रखना चाहिये कि उसे बैल आसानी से खींच सके और उसको एक ओर अत्यधिक न झुकना पड़े। यदि बैल के दायरे का व्यास १६ फुट रखा जाय तो उपर्युक्त सारी शर्तें पूरी हो सकती हैं।

(आ) जुआ

(१) गुजरात की पद्धति का

गुजरात और विदर्भ की घानियों को छोड़कर बैल की गर्दन के सिवा जुए को अन्य कोई आधार ही नहीं रहता। इसलिये गोलाई में घूमते समय बैल को किसी भी चीज से टिकने की गुंजाइश नहीं रहती और उसे बिना आधार ही एक ओर अत्यधिक झुकना पड़ता है। यह जुआ नोभापाट से बंधी और बैल की दोनों बाजुओं से गुजरने वाली दो रस्सियों के सहारे बैल की गर्दन पर टिका रहता है। इसलिये बैल को इन दो रस्सियों के बीच में घूमना लाज़िमी होता है। चूंकि बैल को इस अस्वाभाविक हालत में घूमना पड़ता है इसलिये उसे अपनी गति और झुकाव में का तोल सम्हालने की कला हासिल करनी पड़ती है। नये बैल तोल सम्हालना जल्दी नहीं सीखते और इसके लिये उन्हें करीब १ महीना लग जाता है। इतना करने पर सभी बैल यह सीख पाते हों सो भी नहीं।

गुजरात पद्धति का जुआ नोभापाट से जुड़ा होने के कारण घानी चलाने वाले के लिये तकलीफदेह होता है, क्योंकि उसके कारण तेली को घानी के आसपास घूमने के लिये बहुत कम जगह रह जाती है, पर वह बैल के लिये

आरामदेह मालूम होता है। इसपद्धति में जुए के कारण बैल को बाजू में टिकने के लिये आधार मिल जाता है जिससे उसे अपना तोल सम्हालना आसान हो जाता है। साथ ही साथ बाहर की रस्सी न रहने से वह थोड़ा इधर उधर भी हो सकता है।

यदि जुए को केवल बैल की गर्दन के ही आधार पर न रखकर बोझा-पाट का भी आधार देना हो तो यह जरूरी है कि जुआ बैल की गर्दन की ऊचाई पर हो। इसके लिये जुए को आधार देनेवाले बोझापाट का सिरा ओखली पर यथासभव अधिक ऊचाई पर घूमना चाहिये। फिर भी यदि कुछ ऊचाइ कम पडे तो उस छोर पर एक १½ फुट ऊची खूटी ढीली बैठानी चाहिये। इस खूटी को एक आडे नट-बोल्ट से या एक ढीली खूटी से जुआ जड दिया जाता है। बोझापाट की खूटी और उस खूटी से जुआ को जडनेवाली खूटी ढीली रखने का खास कारण यह है कि बैल की चाल से इनको मिलनेवाले झटकों का उसके कधे पर कोई असर न हो।

(२) मामूली पद्धति का

यह करीब सारे देश में प्रचलित है। इसमे एक लम्बी पट्टी रहती है और कुछ रस्सियों और खूटियों के सहारे उससे बैल जोता जाता है। रस्सिया बैल की दोनों बाजुओं पर रहती हैं और उनका एक सिरा जुए से बधा रहता है और दूसरा सिरा बोझापाट से। दोनों रस्सियों को जोडने के लिये बैल के पेट के नीचे से एक रस्सी लगाई जाती है। बैल की गदन पर जख्म न हो इसलिये जुआ यथासभव चौडा रखा जाता है और उसके और बैल की गर्दन के बीच या तो एक नरम गद्दी या चमड़े की पट्टी रख दी जाती है। इस प्रकार का बोझापाट यदि बैल की ओर झुका हुआ रखा जाय तो आसानी से चलता है। खम को विरुद्ध दिशा में झुका हुआ रखने से यह चाल सधती है।

इसका जो सिरा ओखली से रगडता रहता है उसपर ओखली की गोलाई का एक लकड़ी का आकार बैठा दिया जाता है। घिस जाने पर यह बदल दिया जा सकता है।

(३) ओखली के साथ की रगड

बोझापाट के एक छोर पर वजन रखने से बोझापाट का ओखली से

जब बैल का दायरा जमीन की सतह पर होता है तब उसके वजन खींचने की रस्सी पैर से गरदन तक तिरछी रहती है। इस से बैल के खुर पर जो खिंचाव पड़ता है वह उसकी रीढ़ के समानान्तर न होने के कारण बढ़ जाता है।

बैल को लगी हुई रस्सी दो बलों का फल है जिसमें से एक पैर से रीढ़ तक और दूसरा रीढ़ से गरदन तक रहता है। इन में से हम केवल रीढ़ से गरदन तक का समानान्तर बल ही उपयुक्त पाते हैं। लेकिन पैर से रीढ़ तक का बल न केवल बैल पर अधिक जोर डालता है वरन् वह मोझायाट के एक सिरे पर के बोझ को ऊचा उठाकर उसकी कार्यक्षमता भी कम कर देता है।

ग्याईदार दायरे से हम पैर से रीढ़ तक के बल को निकाल देते हैं और केवल रीढ़ से गरदन तक के समानान्तर बल को उपयोग में लाते हैं जो कि बोझ खींचने की रस्सी की दिशा में काम करता है।

ग्याई के अलावा, बाकडी और खम्भ के बीच की रस्सी की लम्बाई को कम करने से भी समानान्तर बल को बैल के रीढ़ के करीब लाने में सहायता मिलती है।

इस तरह समानान्तर बल को रीढ़ के करीब ऊचा उठाने पर रस्सी के बीच में स्प्रिन्ग बैलेन्स लगा कर देखा तो कुल करीब ६० से ८० पौंड के खिंचाव में से कम से कम १० पौंड का खिंचाव घट जाता है।

४. घानी कैसे बनाना

साधनों की फेहरिस्त

[अ] लकड़ी

क्रमांक	उपयोग	जात	विशेषता	नाप
१	ओखली	इमली, शिरीष, नीम कटहल, आजन, मेरा बबूल	पानी खाई हुई, ठोस और सीधी	लंबाई ५′ से ५½″ व्यास २½″×२½
२	फाचर	बबूल या कुसुम	काफी सीधी और बिना गाठवाली	लंबाई १८″ व्यास १७″
३	लाट	बबूल, कुसुम, मेरा	पानी खाई हुई, सीधी और बिना गाठवाली	लंबाई ९′ से १० व्यास ८″
४	समेटनी	बबूल, कुसुम कोई भी लकडी		१½′×५″×८′ ४½×३″×३″
५	समेटनी का वजन	कोई भी लकडी		करीब १० सेर
६	धावडी	बबूल या अन्य कोई कडी लकडी	बृहत कोण में झुकी हुई	लंबा भाग ४′ छोटा भाग १′
७	बोझापाट			

(अ) गुजराती पद्धतिका

तख्ता	बबूल या अन्य कोई लकडी		४½ से ९′ लंबी १′ से १½ चौड़ और २½″ मोटी
उच्चालन दंड	कोई भी लकडी	मामूली गोल लकडी	१२×५″×५″
खंभ दंड	,,		६′×६″×६″
खंभ	,,		५′×४″×४″
जुआ	,,		८′×४″×४″
जोडपट्टी	,,		३′×३″×३″

(आ) मामूली पद्धति का

घासर	सागोन या अन्य कोई लकडामेर जो ओखली की लकडी से ,नरम हो	२' लबी,४"चौडा और ३" मोटी
जुआ	सागोन-पुराना	और ९" मोटा
८ मोहुरी	कोई भी लकडी	१०"×४"×४"
खूटी	कोई भी लकडी छोटी बाकडीके समान	लबा छोर १' छोटा ३" से ४"

[अ] अन्य आवश्यक चीजें

क्रमाक	नाम	प्रयोजन	वर्णन
१	ड का	मुहरी साफ रखने के लिये	लबाई १½' परिधि१"
२	सब्बल	खली खोदने के लिये	लबाई२½'अष्टकोनी½"
३	तराजू और बाट		
४	पीपे तथा बाल्टिया	तेल और खली रखनेके लिये	हरएक की एक एक जोडी
५	फावडा	गोबर हटाने के लिये	
६	घमेले	बैल को खली खिलाने के लिये	
७	छन्नी	तेल छानने के लिये	
८	रस्से	, खभको बाकडीसे बाधनेके लिये	लबाई १२' मोटाई१"
९,	पानी का नाप	तिलहनमें पानी डालने के लिये	३० तोले मिकदार का धातु का बर्तन
१०	आख पटा	बैल की आखोपर बाधनेके लिये	छोटी टोकनियोपर टाट मढकर बनाई जाती है
११	दो टीन की तश्तरिया	(१) तेल के बर्तन के नीचे गड्ढे में रखने के लिये (२) बाहर के तेल के बर्तनो के नीचे रखने के लिए	गड्ढे के नाप का ९'×४'
१२	लोहे की रिंग	ओखली पर बैठाने के लिए	ओखली के नाप की
१३	चूना, टाट	पॉलिश सामान	३ पौंड, २

[इ] बढई के औजार

१	३ बसूले	१ झुका हुआ और गोल १ सपाट और गोल १ सपाट
२	बरमा	१$\frac{1}{2}$" व्यासवाला, मूठ को करीब १$\frac{1}{2}$' का जोड दिया हुआ
३	सलाख	१$\frac{1}{2}$" व्यासवाली, घामी को कसते समय मुहरीमें रखनेके लिये, जिससे फाचर अपने स्थान में रहे।
४	रुखानिया	
५	दो आरिया	१ बडी, १ छोटी
६	रदा	
७	गोनिया	
८	खराद	
९	सतपस	
१०	परकाल, साबुल	
११	फर्मे	रेखाचित्र न० २ के आधार पर बनाए हुए

[ई] बढई की मजदूरी

क्रमांक	घामीका हिस्सा	आवश्यक दिन: बढईके लिये	आवश्यक दिन: मजदूरके लिये	वर्षमें कुल मजदूरी (युद्धपूर्व के दर से) रु०	आ०	पा०
१	सपूण बानी	२०	५	३८	०	०
२	ओखली	१०	—	१४	०	०
३	फाचर	४	१	९	०	०
४	लाट	१$\frac{1}{2}$	१	३	०	०
५	बोझापाट	१$\frac{1}{2}$	१	१	०	०
६	समेटनी	१	—	०	१२	०
७	बाकडी आदि	१	—	०	१२	०
८	फिटिंग और फुटकर	३	२	६	८	०

७. बनावट

[देखो रेखाचित्र न १]

१. ओखली

(१) लकडी के दोनों सिरे आरी से सीधे काट डालो।

(२) अधिक चौड़े सिरे के एक फुट नीचे - क़रीब १½ फुट नीचे तक बाहर का पृष्ठ भाग चिकना और कुछ उतरता हुआ ऐसा बनाइये। यह उतार बिलकुल गोल और चिकना होना चाहिये क्योंकि इसी के आसपास बोझागाड़ा घूमेगा और यदि यह गोल और चिकना न होगा तो उसका बोझागाड़े के साथ का घर्षण बढ़ेगा और लाट को झटके मिलते रहेंगे।

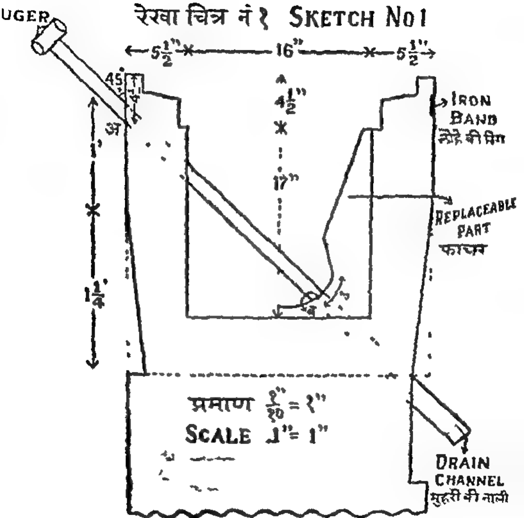
(३) जमीन में गाड़े जाने वाले निचले सिरे पर डामर और रेत लगा देनी चाहिये। जमीन में गाड़ते समय यह बिलकुल सीधा गाड़ना चाहिये और इसका ऊपरी पृष्ठभाग बिलकुल सपाट होना चाहिये। जमीन के ऊपर इसका क़रीब २½ फुट का भाग रहना चाहिये।

कुंड

(४) ऊपरी पृष्ठभाग का सेंटर निकाल कर उस पर ८" त्रिज्या का एक वृत्त खींचिये।

(५) इस पूरे वृत्त को बेलन के आकार में २१½" तक खोद डालिये। इसका व्यास १६" रहे। इसकी जाँच करने के लिये साहुल को ऊपरी भाग पर इस प्रकार जमाइये ताकि उसका केंद्र गड्ढे के केंद्र पर आवे। अब उसकी रस्सी में गड्ढे की त्रिज्या जितनी याने ८" लंबी लकड़ी बाधकर उसको चारों ओर घुमाकर देखिये। गड्ढे की दीवालें और पेंदी गोनिया में है या नहीं यह भी देख लीजिये।

(६) अब खतरस से इस गड्ढे के गोलाइ में खींच दीजिये। अब इसका पृष्ठभाग खोद देना चाहिये ताकि ऊपर १½" ऊँची अ खोदते समय यह ख्याल रखना चाहिये दरार न हो।


रेखा चित्र नं १ SKETCH No 1
UGER
5½"
16"
5½"
45°
4½"
17"
1'
1¼'
IRON BAND
REPLACEABLE PART
प्रमाण १/१० = १"
SCALE .1" = 1"
DRAIN CHANNEL
मुहरी की नाली

ओखली कुंड, मुहरी

७. बनावट

[देखो रेखाचित्र न १]

१ ओखली

(१) लकड़ी के दोनों सिरे आरी से सीधे काट डालो।

(२) अधिक चौड़े सिरे के एक फुट नीचे करीब २½ फुट नीचे तक बाहर का पृष्ठ भाग चिकना और कुछ उतरता हुआ ऐसा बनाइये। यह उतार बिलकुल गोल और चिकना होना चाहिये क्योंकि इसी के आसपास बोकाराट घूमेगा और यदि यह गोल और चिकना न होगा तो उसका बोकाराट के साथ का घर्षण बढ़ेगा और लाट को झटके मिलते रहेंगे।

(३) जमीन में गाड़े जाने वाले निचले सिरे पर डामर और रेत लगा देनी चाहिये। जमीन में गाड़ते समय यह बिलकुल सीधा गाड़ना चाहिये और इसका ऊपरी पृष्ठभाग बिलकुल सपाट होना चाहिये। जमीन के ऊपर इसका करीब २½ फुट का भाग रहना चाहिये।

कुट

(४) ऊपरी पृष्ठभाग का केंद्र निकाल कर उस पर ८" त्रिज्या का एक वृत्त खींचिये।

(५) इस पूरे वृत्त का बेलने के आकार में २१½" तक खोद डालिये। इसका व्यास १६" रहे। इसकी जाँच करने के लिये साहुल को ऊपरी भाग पर इस प्रकार जमाइये ताकि उसका केंद्र गड्ढे के केंद्र पर आवे। अब उसकी रस्सी में गड्ढे की त्रिज्या जितनी याने ८" लम्बी लकड़ी बाँधकर उसको चारों ओर घुमाकर देखिये। गड्ढे की दीवालें और पेंदी गोनिया में है या नहीं यह भी देख लीजिये।

(६) अब परकार से इस गड्ढे के नेरा से २" नीचे एक लकीर गोलाई में खींच दीजिये। अब इसका पृष्ठभाग, जो इस समय सपाट है, कुछ खोद देना चाहिये ताकि ऊपर १½" ऊँची और १½" चौड़ी किनार रह जाय। खोदते समय यह ख्याल रखना चाहिये कि वह केन्द्र की तरफ ½" ढलान में हो।

(७) अब श्रोगली के ऊपर बाहर की ओर से एक लोहे की रिंग जड देनी चाहिये और लकडी और रिंग के बीच खाली जगह हो तो उसमें खपच्चियां ठोक देनी चाहिये।

सूचना—यह रिंग जडने के पहले श्रोगली का बाहरी पृष्ठभाग जितना अधिक से अधिक गोल और चिकना बनाते बने उतना बनाना चाहिये, पर ऐसा करने के लिये बहुत बारीकी नहीं करनी चाहिये क्योंकि यदि कहीं खाली जगहें रह जायँ तो वे खपच्चियों से भर दी जासकती हैं। लकडी का चुनाव करते समय यह ख्याल में रखना चाहिये कि ऐसे गड्ढे २" से अधिक चौडे न हों।

७ कोठा
[देखिये रेखा चित्र० ७]

(अ) पहली पद्धति

(१) १७" व्यास का १८" लंबा एक पक्का सीधा और गांठहीन लकडे का टुकडा लीजिये। उसको सामान्य गोल कर लीजिये और खराद पर लगाकर १६" व्यास रख कर गोल बना दीजिये।

(२) ठीक कुंड की गहराई जितनी लंबाई अर्थात् १७" रखकर दोनों सिरों से काट लीजिये।

(३) एक की ऊपरी सतह पर मध्यबिन्दु से ७" त्रिज्या का एक वृत्त खींचिये। और उसका एक व्यास खींचिये। व्यास के एक सिरे पर दोनों ओर परिधि पर १½" दूरी पर दो बिन्दु लीजिये। केन्द्र और इन दो बिन्दुओं से दो त्रिज्याओं की रेखा खींचिये। लकडे को व्यास की रेखा के अनुसार सीधा खडा काट लीजिये और बाद में दोनों भागों में से त्रिज्या की रेखा के अनुसार काट लीजिये। इस प्रकार दोनों फाचरों में से ३" लकडी काटकर चाभी के लिये जगह की जाती है।

(४) दो फाचरों के सपाट पृष्ठभागों पर बिल्कुल बीच में लंबाकृति रेखाएँ खींचिये। अब 'अ ब क ड ई' फर्मा सपाट पृष्ठभाग पर इस किस्म से रखिये कि फर्मे की सीधी रेखा लंब पर आवे। फर्म को लंब की दोनों बाजुओं पर घिराकर अक्स कीजिये तो रेखाचित्र नं ७ बन जायगा।

(७) पर ओगली के ऊपर बाहर की ओर से एक लोहे की रिंग जड देनी चाहिये और लकड़ी और रिंग के बीच खाली जगह हो तो उसमें पच्चियाँ ठोक देनी चाहिये।

सूचना—यह रिंग जडने के पहले ओगली का बाहरी पृष्ठभाग जितना अधिक से अधिक गोल और चिकना बनाते बने उतना बनाना चाहिये, पर ऐसा करने के लिये बहुत बारीकी नहीं करनी चाहिये क्योंकि यदि कहीं खाली जगह रह जायें तो वे पच्चियों से भर दी जासकती हैं। लकड़ी का चुनाव करते समय यह ख्याल में रखना चाहिये कि ऐसे गड्ढे २" से अधिक चौडे न हों।

२ कोठ

[देखिये रेखा चित्र० २]

(अ) पहली पद्धति

(१) १७" व्यास या १८" लंबा एक पक्का सीधा और गांठहीन लकड़े का टुकड़ा लीजिये। उसको सामान्य गोल कर लीजिये और खराद पर लगाकर १६" व्यास रख कर गोल बना दीजिये।

(२) ठीक कुड की गहराई जितनी लंबाई अर्थात् १७" रखकर दोनों सिरों से काट लीजिये।

(३) एक की ऊपरी सतह पर मध्यबिंदु से ७" त्रिज्या का एक वृत्त खींचिये। और उसका एक व्यास खींचिये। व्यास के एक सिरे पर दोनों ओर परिधि पर १½" दूरी पर दो बिंदु लीजिये। ये और इन दो बिन्दुओं से दो त्रिज्याओं की रेखा खींचिये। लकड़े को व्यास की रेखा के अनुसार सीधा खड़ा काट लीजिये और बाद में दोनों भागों में से त्रिज्या की रेखा के अनुसार काट लीजिये। इस प्रकार दोनों फाचरों में से ." लकड़ी काटकर चाबी के लिये जगह की जाती है।

(४) दो फाचरों के सपाट पृष्ठभागों पर बिल्कुल बन्द में नवाई रेखाएँ खींचिये। अब 'अ ब क ड ई' फर्मा सपाट पृष्ठभाग पर इस किस्म से रखिये कि फर्मे की सीधी रेखा लब पर आवे। फर्मे का लब की दोनों बाजुओं पर गिराकर अक्स कीजिये तो रेखाचित्र न २ बन जायगा।

(५) ऊपर बताये मुताबिक खींचा फाचर पर का कोठे का आकार और उसकी सतह पर खींचे वृत्त का अन्दाज लगाकर प्रथम छाती का भाग तैयार कीजिये।

(६) गरदन की रेखा पर फर्मा 'ई फ' (रेखाचित्र न २) की मदद से गरदन के अर्धव्यास के समान गहरा गड्हा करना। फाचर पर खींचे गरदन के दोनों ओर के बिन्दुओं को जब कि यह फर्मा एक साथ छूये तब खोदा हुआ गड्हा ठीक समझा जायगा।

(७) उसी तरह छूट के रेखा पर छूट के अर्धव्यास के समान गड्हा करना। यह गड्हा करने में पेट की दीवाल छीलते जाना और गड्हा गहरा करते जाना।

(८) फर्मा 'इ क ग' की मदद से दोनों फाचरों में तली का ढलाव कर देना।

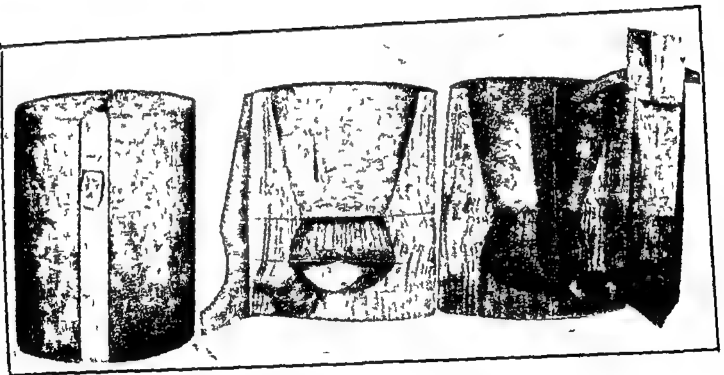
(९) आखीर में फर्मा 'अ ब क ड ई' की मदद से दोनों फाचरों को पूरी चौडाई पर मिला लेना।

(१०) तीसरी छोटी फाचर को हम चाभी कहेंगे। चाभी का मत्था रखना यानी दोनों फाचरों से करीब २" लम्बी और सिरे पर करीब २" मोटी रखना। चाभी कस देने के बाद नाप से ज्यादा लकडी काट डालना। इस चाभी को दोनों फाचरों के बीच में जितनी खाली जगह है उतनी ही चौडी करना।

चाभी इस तरह से तैयार की जाती है। दोनों फाचरों के समान परिधि लेकर उसके पिछले भाग को तैयार कीजिये। फिर दोनों फाचरों में से कटे हुये डेढ २ इञ्च के दो टुकडों को एक साथ मिला कर के इस के सिरे पर रखिये और दोनों बगलों के ढलाव के निशान कीजिये। इस ढलाव की दिशा में चाभी के दोनों बगलों के ढलाव कीजिये। मत्था रख कर बाकी के हिस्से में दोनों फाचरों के समान आकार कर दीजिये।

(११) अब फाचर को कुड में रखकर रेखाचित्र न० १ में बताये मुताबिक मुहरी खोदिये।

'अ' बिन्दु फाचर की ऊपरी सतह, जो कुड की ऊपरी सतह से ४½" नीचे रहती है, के बराबर रखना चाहिये। बरमे को ४५° के कोण पर रखकर चलाना चाहिये। 'ब' बिन्दु जिसे फाचर में छेद गिराते समय



मगनवाडी घानी का कोठा कैसे बनाना

बरमे की नोक रखनी चाहिये, पाचर के कोने से ३" की दूरी पर है। बरमे की नोक ठीक उसी बिन्दु पर रखने में रुकावट आती हो तो 'अ' बिन्दु के पास नाली में थाडी जगह कर लनी चाहिये जिससे कि रुकावट मिट जाये।

सूचना पाचर म छेद गिराते समय वह इधर-उधर घूम न जाय इस लिये उसके और कुड के बीच में ऊपर नीचे दो लकडी की पिट्टयों को खन्न कस देना चाहिये। नीचे की पट्टी करीब ८½" लबी तथा ऊपर की पट्टी करीब १६" लबी रहेगी।

(१२) मुहरी के छेद के बिल्कुल नीचे के भाग में खाचा करके एक लकडी का टुकड़ा जिस की पूरी लम्बाई में अर्धचक्र के आकार की एक नाली खोदी गई हो, लगा देना चाहिये।

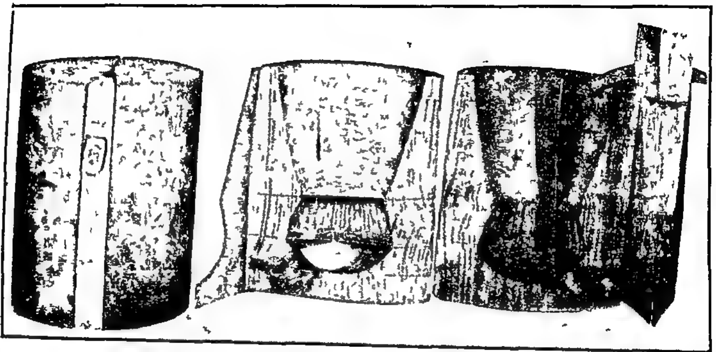
(१३) कुड की दीवाल में भीगा चूना पोतना और गुणटाट लगाना। छेद का स्थान देखकर दोनों पाचर कुड म रखना। दोनों पाचरों के बीच में दुपट गुणटाट रखना। चाभी के दोनों बगल थोडा तेल लगाकर कस देना।

सूचना —चाभी कसते समय छेदवाली पाचर इधर-उधर घूम न जाय इसलिये १½" वाली सलाख नीचेकी ओर से पाचर के छेद में से पसार हो इस तरह से मुहरी मे तग रख दीजिये।

(१४) तली की खाली जगह म छोटी २ पाचरें भरकर तली साफ कर लेना। कोठे की दीवाल पर बाहर रहनेवाले टाट को तथा चाभी के मत्थे को काट कर कोठे को साफ कर लेना।

(१५) रेखाचित्र न० १ म बताये मुताबिक कुड २½" गहरा बनाया गया है। थाले की किनार तथा ढाल के बाद कुड १६¾" गहरा रहता है। इसमे १७" लबाई की पाचर बिठाने के बाद २¾" ऊचा और १" चौडा खाचा रह जाता है। इस खाँचे को १" अधिक चौडा बनाइये ताकि उसका व्यास १८" का हो जाय। इस तरह १" चौडा तथा २¾" ऊचा समेटनी का खाचा बन जाता है।

(१६) तेल के बरतन के जमीन के अदर गड्ढे में रखे जाने के कारण ओखली का वह भाग खुला रहता है। इसलिये गड्ढे की तीन तरफ की



मगनवाडी घानी का कोठा कैसे बनाना

बरमे की नोक रखनी चाहिये, पाचर के कोणे से ३" की दूरी पर है। बरमे की नोक ठीक उसी बिन्दु पर रखने में रुकावट आती हो तो 'अ' बिन्दु के पास नाली में थोडी जगह कर लेनी चाहिये जिससे कि रुकावट मिट जाये।

सूचना पाचर में छेद गिराते समय वह इधर-उधर घूम न जाय इस लिये उसके और कुंड के बीच में ऊपर नीचे दो लकडी की पट्टियों को सख्त कस देना चाहिये। नीचे की पट्टी करीब ८½" लंबी तथा ऊपर की पट्टी करीब १६" लंबी रहेगी।

(१२) मुदरी के छेद के बिल्कुल नीचे के भाग में खाचा करके एक लकडी का टुकडा जिस की पूरी लंबाई में अर्धचन्द्र के आकार की एक नाली खोदी गई हो, लगा देना चाहिये।

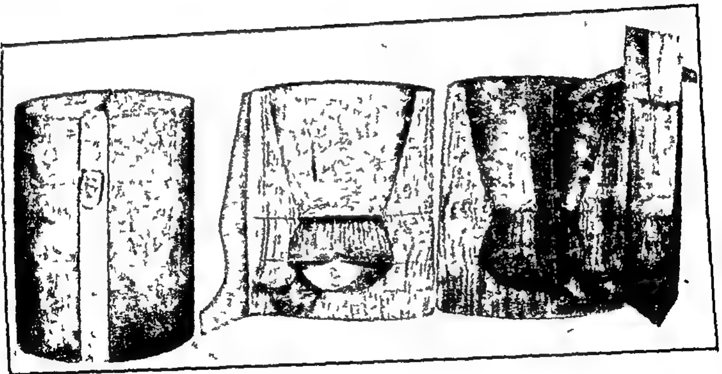
(१३) कुंड की दीवाल में भीगा चूना पोतना और गुणटाट लगाना। छेद का स्थान देखकर दोनों पाचर कुंड में रखना। दोनों पाचरों के बीच में दुपट गुणटाट रखना। चाभी के दोनों बगल थोडा तेल लगाकर कस देना।

सूचना —चाभी कसते समय छेदवाली पाचर इधर-उधर घूम न जाय इसलिये १½" वानी सलाग नीचेकी ओर से पाचर के छेद में से पसार हो इस तरह से मुदरी में तंग रख दीजिये।

(१४) तली की खाली जगह में छोटी २ पाचरें भरकर तली साफ कर लेना। कोठे की दीवाल पर बाहर रहनेवाले टाट को तथा चाभी के मत्थे को काट कर कोठे को साफ कर लेना।

(१५) रेखाचित्र नं० १ में बताये मुताबिक कुंड २½' गहरा बनाया गया है। थाले की किनार तथा ढाल के बाद कुंड १६½" गहरा रहता है। इसमें १७" लंबाई की पाचर बिठाने के बाद २½" ऊंचा और १" चौडा खाचा रह जाता है। इस खाँचे को १" अधिक चौडा बनाइये ताकि उसका व्यास १८" का हो जाय। इस तरह १" चौडा तथा २½" ऊंचा समेटनी का खाचा बन जाता है।

(१६) तेल के बरतन के जमीन के अंदर गड्ढे में रखे जाने के कारण ओखली का वह भाग खुला रहता है। इसलिये गड्ढे की तीन तरफ की



मगनवाडी घानी का कोठा कैसे बनाना

(७) चाभी कस देने के बाद छेद का स्थान देखकर तली कम देना। पहली पद्धति के क्रम १४ के अनुसार कोठा तैयार करना और क्रम १५ के अनुसार समेटनी का नाका बनाना।

(६) तीसरी पद्धति

यदि थड की लकड़ी ठोस हो तो पहली बार बिना पाचर का कोठा बनाकर एक दो साल चलाने के बाद घिस जाने पर उसको कुछ के नाप से खोद कर उसमें पहली या दूसरी पद्धति के अनुसार पाचर बैठा कर कोठा तैयार किया जा सकता है। इससे कुछ तैयार करने की मेहनत में कोठा तैयार हो जाता है और शुरू में पाचरों के तैयार करने का खर्च बच जाता है।

(१) थाले पर मध्यबिन्दु से गरदन, कोठे का ऊपरी किनारा और समेटनी के नाके के अनुक्रम से ७½", १४" और १८" व्यास के वृत्त खींचो। पहले ७½" का गरदन का वृत्त १८½" सीधा गहरा खोदना। रेखाचित्र न० १ के क्रम ६ में बताने के अनुसार थाला तैयार करना।

(२) १४" के वृत्त का अन्दाज लगाकर कोठे की छाती तैयार करना जिससे गरदन के नीचे का पेट का भाग खोदने में आसानी होगी।

(३) कोठे के नाप के अनुसार पेट की दीवाल और तली का ढलाव कर लेना। आखीर में समा अजकटई को लेकर तली का ढलाव, पेट और छाती की दीवाल के साथ मिलाकर तीनों की कमान देख लेना कि ठीक है या नहीं।

(४) रेखाचित्र न० १ के क्रम ११ में बताये अनुसार छाती की दीवाल में मुदरी खोदना।

(५) समेटनी का नाका बना लेना।

३ लाट

रचनाक्रम

(१) लकड़ी में जो बेढंगापन हो उसको बराबर करके उसके पर उसे करीब ८" के व्यास की गोल कर दे।

(२) लकड़ी के दोनों सिरे आरी से सीधे

सूचना दोनों सिरों में से उस सिरे को

दीवालों को मजबूत बनाने के लिये (एक तरफ तो अगली ही की दीवाल रहती है) उनमें बड़े-बड़े पत्थर के चौके जोड़ देने चाहिये या लकड़ी लगा देनी चाहिये।

(आ) दूसरी पद्धति

यदि १७" व्यास का लकड़ा मिलना संभव न हो तो ५ या ६ फाचरों का कोठा तैयार किया जा सकता है।

(१) बबूल या कुसुम के चार पक्के लकड़े लीजिये जिनकी लंबाई १६" और व्यास करीब १२" हो। प्रत्येक लकड़े को उसकी व्यास रेखा पर से सीधा काट दीजिये। उसके चौड़े भाग को कुंड की दीवाल के साथ बिठाने के लिये तैयार कीजिये।

(२) पहले फाचर को कुंड में स्थिर रखने के लिये उसकी बगल में एक छोटा कीला लगाना।

(३) पहले फाचर को कुंड में रक्खो और कुंड के व्यास के दोनों सिरों पर दो खाचे (१" लम्बा १" चौड़ा और ४½" गहरा) काटकर उस पर सहायक पट्टी रक्खो। सहायक पट्टी के मध्यबिन्दु से कुंड की दीवाल को छूते फाचर के दोनों ऊपरी सिरों के साथ जोड़नेवाले अर्धव्यास के ढलाव में फाचर की दोनों बगलों को काट लेना और रन्दा से साफ कर लेना। मध्यबिन्दु से फाचर के सिरे पर ७" अर्धव्यास का वृत्त खींचना।

(४) पहली पद्धति के क्रम ८ से ६ तक में बताने के अनुसार फाचर तैयार करना। फर्क केवल इतना है कि फाचर को तली के भाग में गरदन की अपेक्षा एक सूत अधिक मोटी रखना।

सूचना —एक फाचर इस तरह तैयार होने के बाद उसकी बगल में दूसरी रखना और उसको कुंड की दीवाल और तैयार फाचर की दीवाल से मिलाकर उस पर तैयार फाचर खींच लेना और उस आकार के अनुसार उसे बना लेना।

(५) पहली-पद्धति के क्रम १० के अनुसार चाभी तैयार करना।

(६) चाभी कसने से पहले फर्मा 'ढकना' की मदद से ७" व्यास की तली तैयार करना और पहली पद्धति के क्रम ११ के अनुसार उसमें मुन्री का छेद गिराना और क्रम १२ और १३ के अनुसार चाभी कस देना।

(७) चाभी कस देने के बाद छेद का स्थान देखकर तली कस देना। पहली पद्धति के क्रम १४ के अनुसार कोठा तैयार करना और क्रम १५ के अनुसार समेटनी का ढाचा बनाना।

(६) तीसरी पद्धति

यदि धड़ की लकडी ठोस हो तो पहली बार बिना पाचर का कोठा बनाकर एक दो साल चलाने के बाद घिस जाने पर उसको कुंड के नाप से खोद कर उसमें पहली या दूसरी पद्धति के अनुसार पाचर बैठा कर कोठा तैयार किया जा सकता है। इससे कुंड तैयार करने की मेहनत में कोठा तैयार हो जाता है और शुरू में पाचरों के तैयार करने का खर्च बच जाता है।

(१) थाले पर मध्यबिन्दु से गरदन, कोठे का ऊपरी किनारा और समेटनी के ढाचे के अनुक्रम से ७½", १८" और १८" व्यास के वृत्त खींचो। पहले ७½" का गरदन का वृत्त १८½" सीधा गहरा खोदना। रेखाचित्र नं० १ के क्रम ६ में बताने के अनुसार थाला तैयार करना।

(२) १८" के वृत्त का अन्दाज लगाकर कोठे की छाती तैयार करना जिससे गरदन के नीचे का पेट का भाग खोदने में आसानी होगी।

(३) कोठे के नाप के अनुसार पेट की दीवाल और तली का ढलाव कर लेना। आखीर में पक्का अनकडई को लेकर तली का ढलाव, पेट और छाती की दीवाल के साथ मिलाकर तीनों की कमान देख लेना कि ठीक है या नहीं।

(४) रेखाचित्र नं० १ के क्रम ११ में बताने अनुसार छाती की दीवाल में मुर्री खोदना।

(५) समेटनी का ढाचा बना लेना।

३ लाट

रचनाक्रम

(१) लकडी में जो टेढ़ापन हो उसको बराबर करके उसके एक सिरे पर उसे करीब ८" के व्यास की रख दें।

(२) लकडी के दोनों सिरे आरी से साधे काट दीजिये।

सूचना दोनों सिरों में से उस सिरे को, जो कि मोटा या लकडी की

दूसरी बुराईयों की वजह से कुछ कमजोर हो, ऊपर का नोकीला सिरा बनाने के लिये छोड दीजिये।

(३) नीचे के सिरे की तली पर मध्यबिन्दु निश्चित करके कोई भी एक व्यास खींचिये।

(४) इस व्यास परसे पसार होती हुई एक रस्सी को इस तरह पसार होने दीजिये जिससे कि रस्सी की दोनों बाजुओं पर आवश्यक मोटाई का लकडा बच जाय। यह मोटाई तली से ६" तक ७½" की तथा उसके बाद उपस्थान भाग तक ५½" की रहती है।

(५) रस्सी को तग खींचकर दूसरे सिरे की तली पर उसे पसार होने दीजिये। और उसकी दिशा म पेन्सील से लकीर खींच लीजिये।

(६) पहले सिरे की तली पर प्रथम व्यास मे काटकोण बनाता हुआ दूसरा व्यास खींचिये।

(७) ऊपर बताये मुताबिक लाट के उपस्थानभाग तक की मोटाइ को देखते हुए रस्सी को इस दूसरे व्यास पर रखकर लाट की गोलाई पर से पसार होने दीजिये और उसे तग खींचकर दूसरे सिरे की तली पर रस्सी की दिशा में लकीर खींचिये।

(८) दूसरे सिरे की तली पर भी इन दोनों लकीरों का मिलनबिन्दु लाट के उपरी सिरे का मध्यबिन्दु बनेगा।

(९) दोनों सिरों की तलीओं में निश्चित किये बिन्दुओं से लाट को खराद पर लगाइये।

(१०) नीचे के सिरे पर ४" तक ७½" व्यास की मोटाई बनाइये। इस बिन्दु से १½" की दूरी पर ५½" व्यास की मोटाई बनाईये और इन दोनों मोटाईयों को एक सीधे ढाल में जोड दीजिये।

(११) ५½" का यह व्यास १२" तक चालू रखिये और उसे ३" तक और बढाईये जहा मूल लकडी के साथ एक सीधे खाचे से उसे जोड दीजिये।

(१२) फर्मा ड क ग (रेखाचित्र न० २) की सहायता से लाट की तली का ढलाव बनाइये।

(१३) कोठे की छाती मे पेट में तेल जाने के लिये लाट के उस भाग में

जो कि कोठे की गरदन पर घूमता है एक बाजु पर ढालू गड्ढा-सा बना लीजिये जो कि करीब ४" लम्बा, १½" चौडा और ½" गहरा हो।

(१४) लाट को उठाने में सहायक हो इसलिये उपस्थान भाग से करीब ८" ऊपर की तरफ़ लाट में एक खूंटी लगा दीजिये।

(१५) ऊपर का सिरा करीब ६" नीचे से लेकर इस तरह ढालू बनाइये ताकि नोक करीब १½" व्यास की रह जाय। इस नोक का मध्यबिन्दु खराद पर लगाया हुआ बिन्दु ही रहे।

४ समेटनी

(देखिये रेखाचित्र न० ३)

१ १½' लम्बा, ५" चौडा तथा ४" मोटा बबूल या दूसरी मजबूत लकड़ी का टुकड़ा लीजिये। लकडी की चौडाई पर तली में फर्मा न० १ की सहायता से अन्दर तथा बाहर की गोलाईयों का आकार खींचिये और लकडी का गोलाई के मुताबिक तैयार कीजिये।

२ फर्मा न० ३ को लकडी की अन्दर की गोलाइ की दीवाल के साथ रखकर फर्मे का आकार खींचिये और दीवाल को उसके मुताबिक तैयार कीजिये।

३ फर्मा न० २ को लकडी की ऊपरी सतह पर इस तरह रखिये ताकि फर्मा तथा लकडी दोनों की अन्दर की गोलाईयां मिल जॉय। लकडी पर फर्मे की बाहर की गोलाई खींच लीजिए और उस गोलाइ को तली की बाहर की गोलाइ से सीधे ढाल में मिला दीजिये।

४ इस तरह तैयार हुये समेटनी के मुखभाग को लम्बे दंडे के साथ जोड दीजिये।

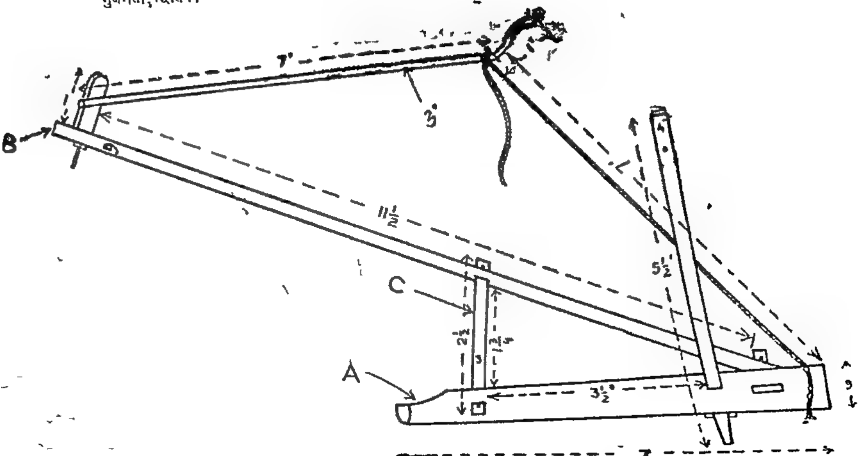
५ बाकडी

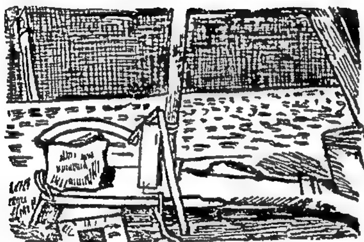
प्रकरण चौथे में दी हुइ आवश्यक साधनो की फेहरिस्त के मुताबिक बाकडी की लकडी पसन्द करके उसमें प्रकरण तीसरे में आकृति सहित बताये मुताबिक लाट के ऊपरी नोक के लिए छेद कीजिए।

६ बोभापाट

साथ में दिये हुए रेखाचित्र न० ४ और न० ५ परसे बढई को गुजराती तथा मामूली पद्धतिका बोभापाट बनाने के लिए आवश्यक मार्गदर्शन मिल जायगा।

गुजराती पद्धतिना बोझापाट रेखाचित्र नं० ४





रेखाचित्र न० ५

मामूली पद्धतिका बोझपाट

५. प्रतिष्ठापन और मरम्मत

१. घानी का प्रतिष्ठापन

(१) ओखली को उसकी कमर में एक खाचा किया है वहा तक याने करीब २½' जमीन के ऊपर रखकर मजबूती से सीधी गाडना चाहिए। वह सीधी गडी है या नहीं यह देखने के लिये मुहरी को कपडा ठूंसकर बन्द कर लिया जाय और ओखली में पानी भर दिया जाय। यदि फाचरों की सतह के बराबर पानी की सतह आ जाय तो समझ लेना चाहिए कि ओखली सीधी गडी है।

(२) मुहरी के नीचे तेल के बरतन का गड्ढा करना चाहिए। इस गड्ढे से ओखली का आधार ढीला न हो जाय इस तरह गड्ढे को मजबूत बनाना चाहिए। याने मुहरी के नजदीक दो बाजुओं पर ओखली में किये गये दो खाचों में दो पटिये रखकर दोनों को सहारा देनेवाला एक तीसरा पटिया रखनी चाहिए।

(३) बोझापाट का ओखली के सहारे घूमनेवाला सिरा ओखली पर ऊँचा उठकर आसानी से बिना घर्षण के घूमना चाहिए। खभ के साथ लगाई गई फाचर को तग या ढीली करने से यह हो सकता है।

(४) खभ के बाहर बोझापाट पर करीब ४½ मन का बोझ रखा जाता है। सरसों या राई की पेराई में यदि खली न जमती हो तो कुछ समय के लिये बोझा थोडा कम कर सकते हैं।

(५) घान खतम होने पर बोझापाट को एक स्टूल पर रख देना चाहिये। दो घान के बीच में बैल को थोडा आराम देना चाहिए।

(६) जुआ और बोझापाट के बीच में की रस्सी करीब ७ फुट लम्बी रहनी चाहिए।

(७) समेटनी का गोलाईवाला सिरा कुड के हाशिये पर रखकर उसका दूसरा सिरा पाट के खभ में खीला ठोक कर उस पर टाग देना चाहिए। और उस सिरे पर करीब दस सेर का वजन अटका देना चाहिए।

(८) मोहरी की नाली में एक सटकर बैठने वाला लोहे का डण्डा डालना

चाहिए जो कोठे की तलों से एक सूत नीचे तक रहे। डका कोठे के अन्दर कभी न घुसना चाहिए। जब उसे ठोककर बाहर निकालना हो तब बैल को ऐसे स्थान पर खड़ा रखना चाहिए जिससे लाट मुहरी के छेद की दूसरी ओर रहे और मुहरी का मुँह खुला रहे। काठे का तेल साफ हो जाने पर डके को दो तीन बार जोर से अन्दर ठोकना चाहिए जिसमें मुहरी के ऊपर जमी हुई खली फूट जायगी और तेल उतर आयेगा।

(९) ओखली के आसपास ३ फुट की जगह छोड़कर बैल को घूमने के लिए करीब १½ फुट गहरी और २½ फुट चौड़ी खाई बनानी चाहिए।

(१०) तेल के बरतन को धूल आदि से बचाने के लिए उस पर एक पटिया ढाक कर रखिये।

७ घानी की मरम्मत

सूचना —नीचे जो ब्यान दिया जाता है उसमें छाती से मतलब है, कोठे का ऊपरी हिस्सा, गरदन से मतलब है मध्य का तंग हिस्सा, और पेट से मतलब है कोठे का निचला हिस्सा।

(१) लाट के दोष।

(अ) लाट का कोठे के उपस्थान पर बिना आश्रय लिए घूमना।

(आ) लाट का बाहर उठ आना।

(इ) कोठे की छाती पर पूरा दबाव न पड़ना।

(ई) कोठे की छाती से पेट में जानेवाले तेल के रास्ते का बन्द हो जाना।

(उ) लाट का टूटना।

(२) कोठे में खली का असमान बनना।

(३) मुहरी का भर जाना।

(४) डके का टेढ़ा हो जाना।

(५) बाकड़ी का पीछे रह जाना।

(६) समेटनी का ठीक काम न देना।

(७) बोझापाट का ठीक तरह से न घूमना।

(८) लाट और पाटन बदलना।

५. प्रतिष्ठापन और मरम्मत

१. घानी का प्रतिष्ठापन

(१) ओखली को उसकी कमर में एक खाचा किया है वहा तक याने करीब २½' जमीन के ऊपर रखकर मजबूती से सीधी गाडना चाहिए। वह सीधी गडी है या नहीं यह देखने के लिये मुहरी को कपडा ठूसकर बन्द कर लिया जाय और ओखली में पानी भर दिया जाय। यदि फाचरों की सतह के बराबर पानी की सतह आ जाय तो समझ लेना चाहिए कि ओखली सीधी गडी है।

(२) मुहरी के नीचे तेल के बरतन का गड्ढा करना चाहिए। इस गड्ढे से ओखली का आधार ढीला न हो जाय इस तरह गड्ढे को मजबूत बनाना चाहिए। याने मुहरी के नजदीक दो बाजुओं पर ओखली में किये गये दो खाचों में दो पटिये रखकर दोनों को सहारा देनेवाला एक तीसरा पटिया रखनी चाहिए।

(३) बोझपाट का ओखली के सहारे घूमनेवाला सिरा ओखली पर ऊँचा उठकर आसानी से बिना घर्षण के घूमना चाहिए। खंभ के साथ लगाई गई फाचर को तंग या ढीली करने से यह हो सकता है।

(४) खंभ के बाहर बोझपाट पर करीब ४½ मन का बोझ रखा जाता है। सरसों या राई की पेराई में यदि खली न जमती हो तो कुछ समय के लिये बोझा थोडा कम कर सकते हैं।

(५) घान खतम होने पर बोझपाट को एक स्टूल पर रख देना चाहिये। दो घान के बीच में बैल को थोडा आराम देना चाहिए।

(६) जुआ और बोझपाट के बीच में की रस्सी करीब ७ फुट लम्बी रहनी चाहिए।

(७) समेटनी का गोलाईवाला सिरा कुंड के हाशिये पर रखकर उसका दूसरा सिरा पाट के खंभ में खीला ठोक कर उस पर टांग देना चाहिए। और उस सिरे पर करीब दस सेर का वजन अटका देना चाहिए।

(८) मोहरी की नाली में एक सटकर बैठने वाला लोहे का डंका डालना

(१) लाट के दोष

(अ) लाट का कोठे के उपस्थान पर बिना आश्रय लिए घूमना।

(१) अगर लाट तली पर अधिक चौडी है तो वह इतना काफी नहीं झुकेगी कि कोठे के उपस्थान को छूकर घूमें इसलिये उसका पूरा दबाव नहीं पड़ेगा। ऐसी स्थिति में नीचे के सिरे को इतना छील देना चाहिए कि लाट उपस्थान को छूकर घूमें।

(२) यदि उपस्थान पर का भाग घूमने की वजह से घिस कर पतला हो जाय या बनाने में पतला रह जाय तो उपस्थान को बिना छुए हुए घूमेगा। ऐसी हालत में या तो लाट को बदल देना चाहिए या उसी लाट को उलट कर तैयार करके चलाना चाहिए।

(३) अगर कोठे की गरदन पर या छाती की दीवाल पर खली बैठने के लिये पर्याप्त जगह न होगी तो खली लाट को कोठे के मध्य की ओर उठा देगी। ऐसा तब होता है जब कि छाती के भाग की लाट अधिक मोटी हो या दीवाल की गोलाई आवश्यकता से कम हो। साधारणतया छाती की दीवाल और लाट के बीच में उंगली जाने भर का स्थान होना चाहिये।

(ब) लाट का बाहर उठ आना।

(१) कुछ समय तक प्रयोग में लाये जाने के बाद कोठे का पेट चौडा हो जाता है और उस भाग की लाट पतली हो जाती है। इसलिये तली में बहुत जगह छूट जाती है जिसमें तिलहन बैठ जाता है और लाट को ऊपर की ओर उठा देता है। ऐसी अवस्था में या तो लाट को बदल देना चाहिये या उलट कर तैयार करके चलाना चाहिये।

(२) अगर लाट की तली और उसके नीचे की कोठे की तली एक दूसरे से मिलती न होगी तो उन दोनों के बीच में जगह छूट जायगी जहा तिलहन बैठ जायगा और लाट को ऊपर उठा देगा। ऐसा प्राय तब होता है जब कि कोठे की तली का ढाल कम होता है या लाट का तला अधिक ढालू और असमान होता है।

(३) यदि आवश्यकता से अधिक मात्रा में पानी पेट में छोड़ दिया जायगा तब भी लाट ऊपर की ओर उठ आवेगी। यह फालतू पानी खली

को बहुत चिपचिपी बना देता है जिसकी वजह से खली कोठे की तली में चिपक कर लाट को ऊपर उठा देती है।

(घ) कोठे की छाती पर पूरा दबाव न पड़ना।

यदि लाट कोठे के उपस्थान पर मोटी होगी तो लाट और छाती के बीच में काफी अन्तर रह जायगा। ऐसा तब भी हो सकता है यदि दीवाल में ढाल ज्यादा होगा। हर हालत में खली मोटी बनेगी और दबाव कम पड़ेगा।

(ङ) कोठे की छाती से पेट में जाने वाले तेल के रास्ते का बन्द हो जाना।

कभी २ वह तेल जो कि कोठे की छाती में जमा होता है नीचे बहुत देर में जाता है। ऐसा प्राय तब होता है जब कि लाट का गरदन की पास का गड्ढा छोटा होता है या कोठे की तली और लाट दोनों के घिस जाने के कारण वह गड्ढा गरदन के नीचे चला जाता है। अगर ऐसा हो तो गड्ढे को कुछ और गहरा बना देना चाहिये और ऊपर की ओर इतना बढा देना चाहिये जिससे कि वह गरदन से करीब १" ऊपर आ जाय।

(च) लाट का टूटना।

अगर लाट समरूप में नहीं घूमती है और उसमें झटके लगते हैं तो वह जहा भी गाठ होगी वहा से टूट जायगी। इसलिये लाट के लिये बिना गाठ की लकड़ी अधिक अच्छी है।

झटके लगने के ये निम्न कारण हैं

(१) घानी आरम्भ करने पर जब कि बोझापाट तिपाई के ऊपर से हटता है तो लाट को बहुत जोर से धक्का देता है। इसलिये लाट और खम्भ दोनों को हाथ से सम्हाल कर धीरे से चलने देना चाहिये। इस प्रकार झटका कम लगेगा।

(२) जब कि करीब २ सब तेल पेर लिया जाता है तब वह कपड़ा जिससे कि तेल पोंछा जाता है लाट के नीचे रख दिया जाता है जिससे कि उस का भी तेल निकल आये। इस समय की खली बहुत सख्त होती है। इसलिये इस कपड़े को बराबर फैलाकर रखना

चाहिये क्योंकि अगर यह कपडा बराबर फैलाकर न रक्खा जायगा तो लाट इस कपड़े के ऊपर आनेपर उठ जायगी और बाद को नीचे गिरेगी।

(३) अगर लाट सीधी नहीं है अर्थात् उसका नीचे का सिरा, उपस्थान और चोटी तीनों एक सिधान में नहीं हैं तो उसमें बहुत झटके लगेंगे और वह बहुत जल्द टूट जायगी।

(४) अगर वह साँचा जो कि लाट के उपस्थान के ऊपर बनाया जाता है काफी दूरी पर नहीं है तो वह कोठे की सतह पर टिका रहेगा और उसकी वजह से लाट कोठे को न छू सकेगी। इसलिये घूमते वक्त वह फिसलेगा और फिसलने की वजह से उसमें झटके लगेंगे। वह पिसे हुए तिलहन को कोठे की ऊपरी सतह पर दबावेगा जरा से इस दबी हुई तिलहन को बराबर हटाते रहना पडेगा। यदि यह साँचा कोठे के मुख से करीब ४" ऊपर बना दिया जाय तो यह सब बातें दूर हो जायें। जब कभी लाट का सिरा और कोठे की तली घिस जाय तो इस साँचे को फिर से ऊचा उठा देना चाहिये।

(५) यदि पानी जो कि थोडी २ देर बाद कोठे में छोडा जाता है काफी नहीं है और खली कोठे में सूखी ही घूमती है तो लाट फिसलेगी और उसमें झटके लगेंगे।

(२) कोठे में खली का असमान बनना

अगर ओखली समरूप में नहीं बैठी है या बाद में वह किसी तरफ झुक गई है तो उस तरफ खली मोटी बनेगी और दूसरी तरफ पतली। यह त्रुटि ओखली को सीधा किये बिना दूर नहीं हो सकती है।

(३) मुहरी का भर जाना

(१) अगर पानी खली में अधिक पड जाय तो खली तली में चिपक जायगी और मुहरी के मुह को बन्द कर देगी।

(२) अगर डका मुहरी में आवश्यकता से छोटा है तो मुहरी खली से भर जायगी।

(४) डके का टेढा हो जाना

डका खली के पतले पर्त को, जो कि मुहरी के मुख पर रहता है

तोड़ने के लिये घुसेड़ा जाता है। इस डफे को तब चलाना चाहिये जब की लाट मुद्‌री के सामने की तरफ हो और मुद्‌री खुली हो। डफा चलाते समय रैल का भी रोक देना चाहिये। अगर लाट डफे के ऊपर से चली गई तो डफा अवश्य ही टेढ़ा पड़ जायगा और तब मुद्‌री को बिना कुछ नुकसान पहुँचाये डफे का निकालना मुश्किल हो जायगा।

(५) वाकड़ी का पीछे रह जाना

अगर वाकड़ी का छेद, जिसमें लाट रहती है किसी अनुपयुक्त स्थान या कोण पर बनता है अथवा जब तक वह छेद खुरदरा रहता है और प्रयोग से चिकना नहीं होता है, तब तब वाकड़ी स्वतंत्रता से लाट के साथ नहीं घूमती है और पीछे रह जाती है। ऐसी हालत में एक लकड़ी खम्भ और वाकड़ी की खूटियों के बीच में तिरछी लगा देना चाहिये। इस तरह से खम्भ अपना जोर लकड़ी के जरिये से पहुँचाता है और वाकड़ी को लाट के साथ चलाता है।

(६) समेटनी का ठीक काम न देना

१ समेटनी की बाहर की दीवाल की गोलाई ठीक हाशिये के विधि की न बनाई गई हो तो वह हाशिये के साथ रगड़ खाती हुई चलेगी

२ समेटनी की बाहर की दीवाल में तथा तलीमें उचित ढलाव न रहा तो हाशिये में खाली जगह छूट जायगी और उसमें तिलहन भरे रहेंगे।

३ समेटनी को खम्भ के ऊपर अधिक ऊँची या अधिक नीची बाँधी जायगी तो भी हाशिये में खाली जगह छूट जायगी। साधारणतया समेटनी हाशिये की दीवाल से करीब १" ऊँची रहती है।

(७) बोझापाट का ठीक तरह से न घूमना

(१) खम्भ का स्थान लाट के ऊपरी सिरे से बोझापाट पर खींचे हुए लम्ब के स्थान के निकट (क्योंकि इस म पाट पर के वजन के लिये गुंजाइश छोड़ना पड़ता है) रहता है। अगर खम्भ गलत स्थान पर लगाया गया है तो बोझापाट की समतुलता चली जाती है। पाट में खम्भ के स्थान को या खम्भ के पाट पर के कोण को बदल देने से यह ठीक हो सकता है। खँभ को पाट के उस सिरे की ओर जो की कुछ जमीन की तरफ चला जाता

है, हटा देना चाहिये या झुका देना चाहिये। दूसरे, खंभ के साथ लगाई जानेवाली फाचर का पाट के उस सिरे की ओर लगाना चाहिये, जोकि ऊँचा उठता है। इस तरह झुके हुये खंभ को नाकडी की रस्सी सीध में खींच लेगी और उसके साथ ही नोभापाट का झुका हुआ सिरा भी उठ आयेगा।

(२) नोभापाट को जुओ के साथ जोडनेवाली रस्सी यथाशक्य बैल के पैर के करीब ही बांधनी चाहिये।

(८) लाट और फाचर बदलना

घानी की कार्यक्षमता में फर्क पड़े, जैसे कि तेल का प्रतिशत कम हो या लाट ऊपर की ओर उठ आवे तो फाचर तथा लाट बदल देना चाहिये। साधारणतया अभी जो लाट और फाचर बनाये हैं वे करीब एक साल तक टिकते हैं।

काठे को निकालने के लिये पहले उसकी चाभीको तोड देना चाहिये।

६. तेल पेराई

तिलहन में तेल छोटे-छोटे कणों के रूप में होता है और उनके ऊपर एक सख्त झिल्ली का आवरण रहता है। तिलहन में पानी मिलाने से और पेरते समय लकड़ी और तिलहन के बीच की रगड़ से जो गरमी पैदा होती है, उसमें पकाने के समान एक प्रक्रिया हो जाती है। इस प्रक्रिया से तेल के कणों के चारों तरफ की सख्त झिल्ली फूलकर मुलायम हो जाती है और तेल के कण फूलकर इस मुलायम झिल्ली को फाड़ डालते हैं। इस तरह तेल पेरने में पानी, गरमी और रगड़ तीनों चीजें अपना अपना काम करता है।

पानी मिलाना—तेल की पेराई में पानी की मिलावट एक महत्त्वपूर्ण कार्य करती है। तेली के लिये इसका ज्ञान लेना जरूरी है कि कब और कितना पानी मिलना चाहिये। इस जानकारी के बिना पेराई दोषयुक्त होगी। अगर कम या अधिक पानी डाला जायगा, तो तेल कम निकलेगा और समय भी बहुत लग जायगा।

इस कला का ज्ञान लेना कोई आसान चीज नहीं, क्योंकि पानी कितना और कब डाला जाय, इसके लिये कोई नपे-तुले कायदे नहीं बनाये जा सकते। यह कई बातों पर निर्भर रहता है। पानी कम-ज्यादा या ठीक है, इसके जानने के लिये सबसे अच्छा तरीका यह है कि खली को निकालकर देख लिया जाय, जैसे भोजन बनानेवाला एक दाना चावल निकालकर यह देख लेता है कि चावल पका है या नहीं। यह काफी दिखभाल और अनुभव के बाद ही हो सकती है। पर सबसे पहले तो मनुष्य की बुद्धि ही है। हालाँकि इस बात का सीखना एक कठिन चीज है, पर यह जितना कठिन है, उतना ही मजेदार और फायदेमंद भी है। यही तो दस्तकारी की खिमत है कि जहाँ बड़ी-बड़ी मशीनों के मामले में मशीन आदमी पर हुकूमत करती है और आदमी को अपनी बुद्धि के प्रयोग

का मौका ही नहीं मिलता, वहाँ दस्तकारी के मामले में आदमी मशीन पर हुकूमत करता है और अपनी बुद्धि के विकास के लिये बेहद मौके पाता है।

इस पानी का परिमाण, तिलहन की क़िस्म, मौसम, उनके पक्केपन और गीले और सूखेपन पर निर्भर रहता है। बरसात में तिलहन में नमी होती है, इसलिये सर्दियों की बनिस्बत कम पानी डालना पड़ता है और गर्मियों में इससे भी अधिक। यह अन्तर क़रीब ५, ७ तोले प्रतिमान होता है।

अगर तिलहन को बिना पानी डाले ही पेरा जाता है, तो थोड़ा-बहुत तेल तो ज़रूर निकल आता है, पर काफी तेल खली में ही रह जाता है। पानी खली से अंतिम शक्य बूँद को निकालने का काम करता है। इसलिए, अगर तिलहन में ज़रूरत के मुताबिक पानी नहीं पड़ा है, तो खली सूखी रह जायगी और सारा तेल नहीं निकल सकेगा। दूसरी तरफ अगर ज़रूरत से ज्यादा पानी पड़ गया है, तो खली चिपकने लगेगी और तब भी पूरा तेल नहीं निकलेगा। इसलिये बहुत ही ज़रूरी है कि पानी ठीक परिमाण में ही डाला जाय। मोटे तौर पर एक पौंड तिल या सरसों के लिये क़रीब ३¼ तोले उबलता पानी चाहिये। पानी ठीक-ठीक पड़ा है या नहीं, जानने की एक मोटी सी पहचान तो यह है कि थोड़े से कुचले हुए तिलहन को निकालकर उसकी गोली बना ली जाय। अगर गोली बन जाय, तो पानी काफी समझना चाहिये और अगर बिखर जाय, तो नहीं। पानी के परिमाण के सिवा उसके डालने के समय का जानना भी ज़रूरी है। चूँकि पानी तेल के निकालने में सहायक होने के साथ ही तिलहन के कुचलने को भी आसान बना देता है, इसलिए इसे प्रारंभ से ही डालना शुरू करना चाहिये। ज्यों-ज्यों चूरा बारीक और खुश्क होता जाय, थोड़ा-थोड़ा करके बराबर डालते रहना चाहिये। अगर चूरे के बारीक होने के पहले ही काफ़ी पानी डाल दिया गया, तो चूरा चिपकने लगता है और बारीक होने में काफी समय लेता है। साथ ही, अगर पानी ठीक समय पर नहीं डाला जाता, तो चूरा बिना खली बने ही कोठे में घूमता रहता है। ऐसी हालत में भी घान के ख़तम होने में काफी समय लग जायगा। कुछ पानी कोठे के निचले हिस्से में डाल देना चाहिये, ताकि खली बन

जाय, क्योंकि जबतक पहले यह खली नहीं बन जाती, तबतक ऊपर का चूरा बिना खली बने ही घूमता रहता है।

पूर्व तैयारी

जल्दी न सड़नेवाले और अच्छे मीठे तेल को निकालने के लिये निम्न सूचनाओं पर अमल करना बहुत लाभकर होगा —

१ पेरा जानेवाला तिलहन अच्छी तरह पका होना चाहिये। उसमें अधपका तिलहन न होना चाहिये।

जब तिलहन अथवा अन्न का बीज उगना शुरू होता है, तब पहले मधु शर्करा अथवा फल-शर्करा बनती है, उसके बाद कारबोज अथवा और विष्मय तत्त्व बनते हैं और उसके बाद स्निग्ध आम्ल तथा ग्लिसरीन। यही स्निग्ध आम्ल तथा ग्लिसरीन जीवन-साधन क्रिया से तेल और चरबी में परिणत हो जाते हैं। इस तरह तिलहन के आरम्भ काल में काफी स्निग्ध आम्ल रहता है। ज्यों-ज्यों बीज बढ़ता जाता है, त्यों त्यों यह आम्ल कम होता जाता है और बीज के अच्छी तरह पक जाने पर करीब-करीब नहीं सा ही रह जाता है। तब अधिकांश में तेल ही होता है।

तिलहन से तेल निकालने से पहले इस बात का समझ लेना बहुत जरूरी है। अधपके तिलहन से तेल में स्निग्ध आम्ल आ जायगा। साथ ही यह तिलहन हवा में पाये जानेवाले नाशक जन्तुओं का बहुत जल्द शिकार हो जाता है। नतीजा यह होता है कि तेल में बदबू आने लगती है और स्वाद भी खराब हो जाता है। इसलिये पूरी तरह पके हुए तिलहन को ही पेरना चाहिये।

२ तिलहन को ठंडी, खुश्क और हवादार जगह में संग्रह करना चाहिये, नमी से बचाना चाहिये।

३ पेरने के पहले रेत और कचरा वगैरह साफ कर लेना चाहिये।

४ पेरते समय तिलहन में से तेल निकलते ही उसे बाहर इकट्ठा नहीं होने देना चाहिये, क्योंकि उस समय इसमें गाद और पानी मिला रहता है। इस तरह से निकाला तेल कच्चा ही रहेगा और जल्दी सड़ेगा।

५ जहाँ तक हो सके, तेल को मिट्टी के बरतनों में नहीं रखना चाहिये, क्योंकि वे तेल को पीकर बुरी तरह चिकने हो जाते हैं। उसके अन्दर का

तेल किसी भी तरह साफ नहीं हो पाता। वह जल्दी ही सड़ जाता और बर्तन के सारे तेल को खराब कर देता है।

रेखाचित्र न० २ में छोटे और बड़े घानके दा परिमाण के कोठे दि गये हैं। सामान्य दुबले बैल से छोटा कोठा और सामान्य मजबूत बैलसे बड़ कोठा चलाया जा सकता है।

यहा बडे कोठे अ के चलाने का ही निवरण दिया गया है। इस में ६ सेर और छोटे में ६ सेर तिलो समाती है। इस हिसाब से छोटे कोठे के लिये दूसरे तिलहनों के परिमाण का अन्दाज लगेगा।

घान का परिमाण तिलहन से तेल निकल जाने के बाद कोठे में बची हुई खली पर निर्भर करता है। अगर तिलहन म से अधिक तेल निकल जायगा तो कोठेमें कम खली रहेगी और घान बडा समायेगा। इसके विपरीत यदि तिलहन में से कम तेल निकलेगा और खली कोठे में ज्यादा बचेगी तो घान छोटा समायेगा। कोठे में डाला गया तिलहन यदि आवश्यकता से कम होगा तो कोठे की छाती में और खास कर उपस्थान के समीप खली बहुत पतली बैठेगी और आवश्यकता से अधिक होने पर इन जगहों पर खली बहुत मोटी बैठेगी।

यहा पानी का जो नाप दिया गया है वह गरम पानी का है। इसको निश्चित रूप में न समझकर लगभग का ही समझना चाहिये। कारण यह है कि उसमें तिलहन की जात, कोठा और लाट के लकडे के गीलेपन, छाती और पेट में बैठने वाली खली के परिमाण आदि बातो के अनुसार थोड़ा बहुत परिवर्तन करना होगा। वर्षा अधिक होने पर तिलहन म और अधिक नमी आ जाती है, इससे उस समय मे [illegible] जो परिमाण [illegible]ा दिया गया है, उससे भी कम करना पड़ता है।

तिलहन

(१) तिल (२) मुगफली (३) न[illegible] (५) राई [illegible] सरसों (७) महुआ (८) रेंडी।

[illegible]न का परिमाण — १ तिल — ६

" समय — १½

तेल का निकलना	४५ प्रतिशत
पानी की मात्रा	जाडे और गरमी मे ६० तोला बरसात में ४० से ५० तोला

प्रथम पानी

तिलहन को कोठे में छोडने के ५ मिनिट बाद १५ तोला पानी छाती में और १० तोला पेट में डालना चाहिये।

दूसरा पानी

प्रथम पानी के ५ मिनिट बाद ३५ तोला पानी छाती मे छोडना चाहिये।

विवरण

जिसमे कि लाट के कोठे में घूमने में जगह की कमी की वजह से क्रुन्ने में कठिनाइ न हो, पूरे तिलहन के ⅞ हिस्से को ही पहले पेरने के लिय डालना चाहिये और बाकी ⅛ भाग को ओखली के थाले पर फैला देना चाहिये। पाच मिनिट के बाद जब कि कोठे के अन्दर का तिलहन ऊपर आ जाय तब जैसे कि ऊपर बतलाया गया है प्रथम पानी देना चाहिये। बरसात में तिलहन चिपचिपा हो जाता है। उस समय वह आसानी से ऊपर नहीं आता। इसलिये पानी देने के पहले ही एक दो बार उसे खोद देना चाहिये। इस बात में निश्चय होने के लिये कि पानी छाती में ही न रुक जाय और पेट में पहुँच जाय कोठे में गरदन के पास हाथ-समेटनी से जगह बनाकर पानी छोडना चाहिये।

अगर पेट मे काफी पानी नहा पहुचता है तो छाती की खली चिपचिपी बन जाती है और महीन होने के पहले ही तेल निकलने लगता है। पेट के तिलहन का चूरा भी खलीका रूप नहीं धारण करता और घूमते २ जब कि वह छाती तक पहुँच जाता है तो वह तेल को काफी देर तक स्वच्छ नहीं बनने देता है। और जबकि नाली खोली जाती है तो गाद से मिला हुआ तेल निकलने लगता है। इस प्रकार यदि छाती में अधिक पानी है तो आवश्यक तेल ठीक समय से पहले ही निकलने लगता है और यदि वह समरूप में छोडा गया है तो चूरा यसी ही हालत मे गिर जाता है।

बरसात ऋतु में प्रथम पानी मे सिर्फ ५ तोला पेट मे छोड़ना चाहिये, अगर ज्यादा डाला तो लाट ऊपर की ओर उठ आयगी।

पहला पानी देने के बाद समेटनी को प्रयोग मे लाना चाहिये और करीब पाच मिनिट के बाद दूसरा पानी, ३५ तोला और यदि बरसात हो तो १५ से २० तोला तक, काठे की छाती में छोड़ना चाहिये। दूसरा पानी देते वख्त अगर पेट में काफी पानी न होने के चिन्ह दिखते हों तो दूसरे पानी मे से करीब ५ तोला पानी लेकर जगह बनाकर पेट में छोड़ देना चाहिये। दूसरे पानी के बाद थाले पर के बाकी तिलहन को भी धीरे २ कोठे में डाल देना चाहिये क्योंकि पहले तिलहन के पिसने की वजह से कोठे में लाट के लिये झुक कर घुमने की जगह हो जाती है। इस तरह से पानी की पुरी मात्रा १५ मिनिट मे दे दी जाती है।

दूसरे पानी के करीब १० मिनिट बाद जब कि तेल कुछ २ दिखाई पड़ने लगता है तब थोड़ासा चूरा लेकर उसकी गोली बनाना चाहिये। अगर यह गोली बनाने मे फूट जाय तो मालूम होता है कि पानी काफी नहीं है। इसको ठीक करने के लिये करीब ५ तोला पानी छाती मे छोड़ना चाहिये। इस हालत में खली को सब्बल से पाच या छ बार खोदकर उलट देना चाहिये। इस उपाय से चूरा खली के साथ मिल जाता है और शुद्ध तेल निकल आता है। इसके बाद समेटनी को हटा देना चाहिये और खली को ऊपर की तरफ़ इकट्ठी होने देना चाहिये। इसके करीब ५ मिनिट बाद नाली को खोल देना चाहिये जिससे कि तेल नीचे बह कर आ जाय। एकत्रित तेल को छान लेना चाहिये और गाद को फिर कोठे में छोड़ देना चाहिये। बीच २ मे नाली को डके से साफ करते रहना चाहिये। इस प्रकार से करीब सवा घटे मे सब तेल गिर जाता है। आखीर में दो या तीन तोला पानी खली को ढीला बनाने के लिये उसपर छोड़ देना चाहिये। इसके बाद बैल को चार या पाच चक्कर घुमाकर खली निकाल लेना चाहिये। इस प्रकार घान समाप्त हो जाता है।

२ मूगफली

प्रतिघान का परिमाण	६ सेर
" " समय	१¼ घटा

तेल का निकलना — ४५ से ४६ प्रतिशत

पानी की मात्रा — ६० तोला गरमी और जाडे में
३० से ३५ तोलातक बरसात में

विवरण

मूंगफली को पेरने के पहले उसे एक घमेलेमें गरम कर लेना अच्छा है। बिना गरम किये मुगफली पेरने से उसमें से दूध के समान सफ़ेद और गाद के साथ तेल निकलता है। गरम करने से साफ तेल निकलता है।

मुगफली के पेरने की रीति करीब २ तिल ही के समान है। अन्तर केवल इतना है कि उसके पेरने में करीब ५ तोला कम पानी पेट में छोडा जाता है।

बरसात में नमी की वजह से तिलहन मुलायम होते हैं। इसलिये पानी की मात्रा कम कर ३५ तोला डाला जाता है जिसमें से सिर्फ ५ तोला कोठे के पेट में छोडना चाहिये।

यह अनुभव किया गया है कि समूची मुगफली पेरना उसके दाने पेरने के बनिस्बत कहीं आसान है। उसमें एक तो समय की बचत होती है और तेल में गाद नहीं उत्तरती। एक्स्पेलरवाली मिलों में भी दानों के साथ कुछ समूची मुगफली रखना सुविधाजनक पाया गया है। इसकी खली जानवर खाते हैं और खानदेश में वही इस्तेमाल की जाती है।

पर इसमें एक बात खासकर ख्यालमें रखनी चाहिये कि यदि समूची मुगफली पेरनी हो तो उसे पेरने के पहले खूब साफ धो लेना चाहिये ताकि उसकी सारी मिट्टी धुल जाय। ऐसा करने से तेल का पूरा अंश निकल सकता है और जानवरों को साफ खली मिल सकेगी। समूची वही मुगफली पेरनी चाहिये जिस का छिलका पतला दाना छोटा पर अधिक तेल वाला होता है। यदि बड़े दाने की मुगफली पेरनी हो तो उसका कुछ ही हिस्सा समूचा रखना चाहियें। समूची मूंगफली पेरने से तेल के प्रमाण में कोई फ़र्क नहीं पडता, पर पेराई आसान होती है। और मूंगफली छीलने की मिहनत तो बचती ही है।

पर यदि खली मनुष्यों के खाने के काम आती हो तब तो दाने निकाल कर ही पेरना चाहिये।

३. नारियल

प्रतिधान का परिमाण	१० सेर
" " समय	¾ से १ घंटा
तेल का निकलना	५५ से ६० प्रतिशत
पानी की मात्रा	३० से ३५ तोला गरमी और जाड़ेमें
	१५ से २० तोला बरसात में

<u>प्रथम पानी</u>

पहले ५ तोला छाती में -

<u>दूसरा पानी</u>

दस मिनिट के बाद १० तोला छाती म और ५ तोला पेट में

<u>तीसरा पानी</u>

दूसरे पानी के दस मिनिट बाद ५ से १० तोला तक छाती में

<u>विवरण</u>

पहले पानी के बाद जब कि गरी के बड़े २ टुकड़ों का चूरा हो जाय तो उनको एक या दो बार खोद कर उलट देना चाहिये। जब कि वह कुछ सूखने लगे तो ऊपर बतलाये अनुसार दूसरा पानी देना चाहिये। इसके दस मिनिट बाद यदि चूरा तेल के साथ घूम रहा है तो तीसरा पानी देना चाहिये। इस प्रकार से बाकी खली के साथ दबने से चूरा का सब तेल शुद्ध निकल आता है। इस अवस्था म खली को एक या दो बार खोद कर उलट देना चाहिये।

४ अलसी

प्रतिधान का परिमाण	६ सेर
" " समय	१½ घंटा
तेल का निकलना	३२ से ३५ प्रतिशत
पानी की मात्रा	६५ तोला, वर्षा में

प्रथम पानी

आरम्भ में १० तोला छाती में

दूसरा पानी

पहले पानी के २५ मिनिट बाद १५ तोला छाती में और १० तोला पेट में

तीसरा पानी

दूसरे पानी के १५ मिनिट बाद २५ से ३० तोला तक छाती में

विवरण

सब तिलहन जो कि एक घान में छोड़ा जाता है, वह आरम्भ से ही पिसने दिया जाता है। पहले लगभग १० तोला पानी छाती में छिड़का जाता है। इस जल से चिकनी और कड़ी अलसी मुलायम हो जाती है और इस प्रकार उसका फिसलना भी बन्द हो जाता है।

पहले पानी से करीब २५ मिनिट बाद जब कि तिलहन आधा पीस जाय तब ऊपर बतलाई हुई रीति से दूसरा पानी देना चाहिये। यह पानी चूरा को अधिक मुलायम और चिपचिपा बना देता है जिसकी वजह से वह जल्दी पिर जाता है और जल्दी घूमता है। इस अवस्था में समेटनी को प्रयोग में लाना चाहिये।

दूसरे पानी के दस मिनिट बाद जब कि चूरा सूख जाता है तो तेल निकलने लगता है और घुमाव धीमा पड़ जाता है। तब तीसरा पानी देना चाहिये। इससे चूरा फिर से मुलायम और चिपचिपा बन जाता है और उस के घुमाव में तेजी आ जाती है। इस बार चूरा बहुत बारीक हो जाता है और तेल लगभग दस मिनिट में निकल आता है। अलसी से कम मात्रा में तेल निकलने के कारण जो तेल कोठे में निकलता है वह, यदि कोठे के पेट में ठीक मात्रा में पानी पहुँच जाता है तो वहां चला जाता है इसलिये कोठे में कुछ तेल हुआ है या नहीं इस पर सन्देह होने लगता है। अगर पेरा हुआ तेल छाती में रहता है तो उसका यह मतलब है कि पेट में काफी पानी नहीं पहुँचा है। और शुद्ध तेल के बजाय यह केवल गाद है जो कि ऊपर घूम रहा है।

अलसी की खली को खोद कर उलटना बहुत आवश्यक नहीं है परन्तु यदि तेल के जथे में से बचा गाद एक घान में मिलाया जाय तो खली को चार या पांच बार खोद कर उलट देना चाहिये।

जब कि तेल में जरा भी चूरा न हो तब समेटनी को हटा देना चाहिये। अगर कोठे की छाती का एकत्रित तेल पेट में नहीं जाता है तो नाली खोल देना चाहिये और जो गाद बचे उसे फिर खली में मिला देना चाहिये। इस खली को कोठे से छुड़ाने के लिये पानी छिड़कने की कोई आवश्यकता नहीं है। शेष के लिये तिल के सम्बन्ध में जो वर्णन दिया गया है उसे देखिये।

५. राई

प्रतिघान का परिमाण	७½ सेर
" " समय	१½ घंटा
तेल निकलना	३० प्रतिशत
पानी की मात्रा	७० तोला, वर्षा में ६० तोला

विवरण

राई पेरने की रीति अलसी के ही सदृश है।

६ सरसों

प्रतिघान का परिमाण	८ सेर
" " समय	१½ से १¾ घंटा
तेल का निकलना	३५ से ४० प्रतिशत
पानी	६० से ६५ तोला

विवरण

इसके पेरने की रीति राई के समान है।

नोट—सरसों और राई को पानी इस तरह से भी दिया जाता है। घानी में डालने के पहले १५ तोला पानी काफी रगड़ कर मिलाया जाता है। पानी का बाकी हिस्सा पेरने के समय मिलाया जाता है।

७. महुआ

प्रतिघान का परिमाण	८ सेर

" " समय	पौन घंटा
तेल निकना	३५ प्रतिशित
पानी	२० से २६ तोला

प्रथम पानी

आरम्भ में ५ तोला छाती में

दूसरा पानी

दास मिनिट के बाद १० तोला छाती में और ५ पाच तोला पेट में

तीसरा पानी

दूसरे पानी के दस मिनिट बाद ५ तोला छाती में

विवरण

अगर तिलहन पका और तर है तो पानी की कोई आवश्यकता नहीं। ऐसे तिलहन से बहुत कम प्रतिशत में तेल निकलता है।

यदि तिलहन पका, सूखा और लाल तीनों हैं तो पानी की आवश्यकता होती है। साधारणतया ताजा तिलहन केवल वर्षा ऋतु में मिलता है अत उसके तर होने के कारण पानी देने की कम आवश्यकता पड़ती है। केवल ताजे तिलहन अच्छे प्रकार से पिरते हैं। पुराने तिलहन में यदि महुआ के फूल न मिलाये जाय तो तेल निकला कठिन है।

प्रथम पानी तिलहन के केवल सूखे होने पर देना चाहिये। दूसरा और तीसरा पानी ऊपर बताये हुए कायदे से देना चाहिये।

खली को दो या तीन बार खोद कर उलट देना चाहिये।

८ रेंड़ी

प्रतिपान का परिमाण	६ सेर (छिलका सहित)
" " समय	१ घंटा
तेल निकलना	४० प्रतिशत
पानी की मात्रा	बिलकुल नहीं

विवरण

तिलहन को गरम पानी में उबालने के बाद सब पानी छानकर कोठे में डालना चाहिये। इस क्रिया से तिलहन मुलायम पड़ जाती

है। दस या पन्द्रह मिनिट के बाद जब कि तेल दिखाई पड़ने लगे तो खली दो या तीन बार खोद कर उलट देना चाहिये और बाद में नाली को खोल देना चाहिये।

तिलहन को कोठे में छोड़ते समय यदि उसमें जरा भी पानी रह गया है तो खली बहुत चिपचिपी हो जाती है और लाट ऊपर की ओर उठ आती है और गर्मी बिलकुल नहीं उत्पन्न होती। इस अवस्था में एक जलती हुई मशाल लेकर कोठे में घुमा कर चूरे को गरम कर लेना चाहिये।

यह मशाल जब कि पानी को भाप बनाकर उड़ा देती है तो कोठे में गर्मी उत्पन्न हो जाती है और तेल गिरना आरम्भ हो जाता है।

---

७. वनस्पति घी और घानी का ताजा तेल

वनस्पतिजन्य तेलों को साफ करने और हाइड्रोजनेटेड वनस्पति घी बनाने का धधा भारत में इतना जोर पकड रहा है कि तेल पेरने के साथ का धधा न रह कर, इसने तेल पेरने के धधे को ही अपना एक छोटा धधा बना लिया है। बहुत सी तेल-मिलें अपना सारा तेल केवल वनस्पति घी बनाने वाली मिलों के लिये बनाती हैं, और ऐसी मिलों की सख्या धीरे धीरे बढ ही रही है, और उम्मीद तो ऐसी है कि आनेवाली प्रांतिक युद्धोत्तर पुनर्रचना की योजनाओं के अनुसार वह कहीं अधिक हो जायगी। जैसा सभी ऐसे आदोलनों के साथ होता है जो स्थापित हितों द्वारा चलाये जाते हैं इस धधे ने भी विज्ञापन और पैसे से खरीदे हुए वैज्ञानिकों के प्रचारात्मक सदेशों द्वारा जोर पकड लिया है। यह सब प्रोपेगडा अर्ध सत्यात्मक है और इसलिये खतरनाक है। ये लोग जनता में जानबूझ कर गलत बातें फैलाते हैं और उनको विश्वास दिलाते हैं कि वनस्पति घी सपूर्ण और स्वास्थ्यकर खाद्यपदार्थ है। वैज्ञानिक दृष्टि से वे इस वस्तु को तेल की अपेक्षा अधिक पौष्टिक कह ही नहीं सकते। केवल एक गुण शुद्ध वनस्पति घी में तेल की बनिस्बत यही कहा जा सकता है कि वनस्पति घी 'सादे तेल' की अपेक्षा अधिक दिनों तक रखा जा सकता है।

यहाँ इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि जब वैज्ञानिक 'सादा तेल' कहते हैं तो उनका मतलब मिलसे निकले तेल से होता है, घानी से निकले ताजे तेल से उसका कोई सम्बध नहीं होता। असल में देखा जाय तो इन दोनों तेलों में बडा फर्क है। मिल का तेल तो खाने वाले के पास पहुचने तक अवश्य ही खराब हो जायगा। क्यों कि पहले तो मिल का तेल यू ही इतनी अधिक मात्रा में रोज पेरा जाता है कि तिलहन में से गन्दगी और सडे बीज आदि साफ कर डालना सम्भव नहीं होता। और फिर मिलों में छिलका उतरा हुआ तिलहन गोदामों में रखा जाता जो वैसे भी पूरे बीज की अपेक्षा जल्दी सड जाने की प्रवृत्ति रखता है। मिलों में छिलकेदार पूरे तिलहन इकट्ठा रखना और रोज की रोज उसके छिलका उतार कर पेरना मिलों के लिये सम्भव नहीं

है। इन तिलहनों को रखने का इन्तजाम भी एक दम सतोष जनक नहीं कहा जा सकता। इसलिए बीजों को सडने के लिये अपूर्व अवसर मिल जाता है। इस तरह यह तेल मिलों के एजटों, दलालों और दूकानदारों के पास होता हुआ उपभोक्ता के पास तक पहुचता पहुचता और भी सड जाता है।

गुण

इसलिए ऐसे 'साद तेल' की अपेक्षा वनस्पति घी खाने की जो वैज्ञानिक राय देते हैं, उससे हम भी सहमत हैं। साफ किया हुआ तेल सडे तेलसे सदैव अच्छा है। परन्तु सडान तेलका कोई स्वाभाविक गुण तो है नहीं, यह तो मिल की लबी और गलत व्यवस्था के कारण तेलमें उत्पन्न हो जाता है। 'सडान' अवश्य ही एक ऐसी समस्या है जो मिल-तेलके सामने आती है, इसलिये साफ किये हुए हायड्रोजनेटेड तेल उसी मिल-समस्याके समाधान की तौर पर शक्य है।

वैज्ञानिकों के पास ऐसी कोई दलील नहीं जिसके द्वारा वे वनस्पति घी को ताजे घानीसे निकले तेलसे अच्छा ठहरा सकें। ग्राम घानियों द्वारा ताजा और साफ तेल निकाला जा सकता है। दोनोंका मुकाबला यहीं नहीं खतम हो जाता। मिलका कच्चा या सादा तेल खानेके योग्य नहीं समझा जाता है। इसकी सडान दूर करनेके लिये इसका साफ करना आवश्यक हो जाता है। इसलिये तेल साफ करनेमें जो खर्च बैठता है वह सब मिल-तेलके पेरने की कीमतमें जोडा जाना चाहिये। इसलिये असलमें तो घानीके ताजे तेल और मिलके कच्चे तेल की कीमतकी तुलना करना ही गलत है। फायदेकी बात तो यह है कि मिलके साफ किये तेल या वनस्पति घी और घानीसे निकले ताजे तेल की तुलना की जानी चाहिये। यदि इस प्रकार देखा जाय तो पता चलेगा कि पेंचीदा तेल-मिल और कीमती सफाई और हाइड्रोजनेट करने की मशीनों से हमारा सादा कोल्हू कहीं अच्छा बैठता है। यहाँ तुलना सादगीवाली घानी और पेंचीदगीवाली मिल में नहीं है बल्कि मूल भिन्नता तो दोनोंका व्यवस्था में है। एक विकेन्द्रित उत्पादन पर टिको है तो दूसरी का ध्येय ही केन्द्रीकरण है। उद्योगों के अंगों को लेकर केन्द्रित उद्योगों में विकेन्द्रित उद्योगों से अधिक कार्यक्षमता देखना कितना भ्रामक है इसका यहाँ हमें एक अच्छा उदाहरण मिल जाता है।

धोपकता

वैज्ञानिक किस प्रकार कटु सत्यको पचा ले जाते हैं और जनता के सामने आने ही नहीं देते यह एक दृष्टान्त से साफ हो जाता है। वनस्पति घी में विटामिन डालने की क्रिया ही को लीजिये। विदेशों में राजाज्ञा के अनुसार कोई वनस्पति घी बिना विटामिन डाले बना नहीं सकता, पर अपने देश में ऐसे किसी नियम का सर्वथा अभाव होने से कैसे कहा जा सकता है कि सभी वनस्पति घी बनाने वाले उसमें विटामिन डालते ही होंगे? कहने को कहते जरूर हैं पर बात संदेहात्मक है। परन्तु यदि डालते हैं तो क्या कभी जनता को मालूम होने देते हैं कि किन द्रव्यों का उपयोग किया जाता है? यदि जनता को पता चल जाय कि विटामिन मछलीकी तिल्ली का तेल डालकर दिया जाता है, तो उनमेंसे अधिक तर ऐसे घी को छुएँ भी नहीं, खाने की बात तो दूर रही। परन्तु प्रश्नके इस पहलू पर जनताको कठिनता से कोई जानकारी हो पाती है।

और फिर हाइड्रोजनेटेड तेल, घानीके ताजे तेलकी अपेक्षा विटामिन डालनेके लिये कोई अधिक उपयुक्त भी तो नहीं है।

इस तरह हम देखते हैं कि घानीके ताजे तेलसे मिलतेल की तुलना ही क्या, तुलना तो वनस्पति घी से की जानी चाहिये। वनस्पति घी में केवल एक नकारात्मक गुण दिखाया जा सकता है और वह है कि 'सड़ान से रोकना।' इससे यह घानीके ताजे तेलसे किसी भी बात में उत्तम नहीं ठहराया जा सकता। यह मानी हुई बात है कि गाय भैंस के घी से तो वनस्पति घी का कोई मुकाबला ही नहीं है।

सिद्धान्ततः वनस्पति घी तेल मिल के कच्चे तेल से अच्छा ठहराया जाता है और ऐसे तेल की जगह इस्तेमाल करने को बताया जाता है। पर वास्तव में यह असली घी की जगह लेने का प्रयत्न कर रहा है। क्योंकि विशुद्ध घी मिलना ही कठिन हो गया है। और इस बात से वनस्पति घी फैक्ट्रियों को और उत्तेजना मिली है और उनकी बिक्री बढ़ी है। कहा जाता है 'जब मिला हुआ घी ही लेना है तो असली घी के दाम ही क्यों दिये जाँय, सीधे सीधे वनस्पति घी ही क्यों न खरीदो।' यह चाल खूब रही! पहले तो मिलावट की जा सके ऐसी व्यवस्था उत्पन्न कर दी, अब कहते हैं मिलावट क्यों खरीदते हो

सीधे बनावटी घी न खाओ। इतना ही नहीं ये लोग इसके भी विरुद्ध हैं कि वनस्पति घी किसी ऐसे रंग का बनाया जाय जो असली घी से आसानी से पहिचाना जा सके। क्योंकि उस हालत में तो उनके बहुत से ग्राहक छूट जायंगे। इसीसे वह घी की शक्ल छोड़ने को किसी तरह तैयार नहीं है। यदि वे असली घी को वनस्पति घी से अच्छा मानते हैं, और कोई वजह नहीं कि न माने, तो उन्हें असली घी के ग्राहक के राह में रोड़ा नहीं अटकाना चाहिये। मिलावट रोकने का यह सबसे ठीक रास्ता होगा। सरकार को इस मामले में सख्ती करने की जरूरत है।

गन्ध

तेल के साफ करने में जैसे सड़ान दूर होती है वैसे ही गन्ध भी उड़ जाती है। यह दूसरा काम निर्गन्धीकरण कहलाता है और यह दम भरा जाता है कि इसके द्वारा कैसी भी तेज और अजीब गंध मिटाई जा सकती है। पर किसी तेल की विशेष गंध को उड़ा देना कोई अच्छी बात नहीं कही जा सकती है। आखिर अपनी विशेष महक के बिना गुलाब गुलाब ही कहाँ रहा! खाने की चीजों को ही लीजिये, क्या हमें विशेष गंध के पदार्थों से निर्गंध पदार्थ अधिक पसन्द हैं? चावल खरीदते समय लोग सुगंधित चावल को अच्छा समझकर खरीदते हैं। तेल के बारे में भी वही बात है। लोग तेल को बिना सूंघे नहीं खरीदते। तेल लोगों को उसकी गंध के कारण ही विशेष पसन्द आता है, यदि वह गंध न हो तो उन्हें मजा ही न आये। अलसी के तेल में एक तेज महक होती है और सरसों के तेल में तो उससे भी अधिक तीखी गंध आती है। जो लोग आदी नहीं है उन्हें इन तेलों से नफरत होगी। पर जो इन्हीं का उपयोग करते हैं उनका इनके बिना काम ही नहीं चल सकता। जब यह बात है तो तेलों को निर्गंध करना बेकार है और इस पर गर्व करना मूर्खता है। पर रोजगारी अपनी कमजोरियों को तारीफ के रूपमें कर दिखाने की कला भली भांति जानते हैं।

अब बहुत तारीफ किये गये वनस्पति घी की पोषकता पर भी जरा गौर कीजिये। इस विषय की जो भी जानकारी प्राप्त है उसके अनुसार घानी का ताजा तेल वनस्पति घी के मुकाबले में कहीं अधिक पाचक है और इसलिए स्वभावतः वनस्पति घी की पोषकता कम ही है। यह एक बनावटी पदार्थ है

जो मानव शरीर के अनुपयुक्त है, इसलिये इसका बहुत सा अंश ज्यों का त्यों बाहर निकल जाता है। हाइड्रोजनेशन में होने वाली प्रक्रियाओं को समझने पर भली भाँति यह बात साफ़ हो जाती है।

१ स्टीयरिक ग्लिसराइड (Stearic glyceride) की मात्रा बढ़ जाती है और ओलेइक ग्लिसराइड कम हो जाते हैं।

२ ओलेइक एसिड का काफी भाग आइसो ओलेइक एसिड में परिवर्तित हो जाता है, जिसका द्रवण बिंदु (४५° से) ओलेइक एसिड के द्रवण बिंदु (१४° से) से कहीं ऊंचा है।

इन दोनों बातों का तेल की पाचकता पर निम्न असर पड़ता है। मानव पाचन-यन्त्र को स्टीयरिक एसिड ऐसे सैचुरेटेड ग्लिसराइड पचाने में ओलेइक एसिड ऐसे अनसचुरेटेड ग्लिसराइड्स से अधिक मेहनत पड़ती है। इस तरह ओलेइक एसिड ग्लिसराइड से स्टीयरिक एसिड ग्लिसराइड बन जाने पर तेल की पोषकता कम हो जाती है। यह बदला स्वरूप शरीर को बहुत भारी पड़ता है और काफी अंश में शरीर से ज्यों का त्यों बेपचा ही निकल जाता है।

आइसो ओलेइक एसिड का पचाना तो ओलेइक एसिड से और भी मुश्किल होता है क्योंकि उसका द्रवण बिन्दु ऊंचा होता है। इससे हाइड्रोजनेशन में होने वाले परिवर्तन से खाने वाले को नुक्सान ही होता है।

इसलिये यदि वनस्पति घी बनाने से पोषकता बढ़ने के बजाय कम हो जाती है, कम से कम अधिक तो होती ही नहीं, तो इतनी सब पूंजी, मेहनत और समय जो इस पर लगाया जाता है समाज को घाटे में ही डालता है। पर ...सा कि बताया जा चुका है, तेल मिल और वनस्पति घी फैक्टरी यह दोनों ...से मिले जुले हैं और एक दूसरे से अलग नहीं किये जा सकते। मिल में ...पेरना तो आधी क्रिया हुई, क्योंकि यह तेल तो जल्दी ही सड़ जाता है, जो ...की व्यवस्था के कारण होकर ही रहेगा।

असली तरक्की

...मेशा यह दलील दी जाती है कि जीवन का पैमाना ऊँचा करने के लिये ...ानिक आविष्कारों का पूरा पूरा उपयोग करके लाभ उठाना चाहिये। ...कल और श्रम की बचत करने के साधन, उत्पत्ति बढ़ाने के लिये सर्वोत्तम ...ी है। यदि उनसे होने वाली सामाजिक हानियों के कारण हम

उनका उपयोग छोड़ दें तो उसके अर्थ होंगे हमने विज्ञान की देनको ठुकरा दिया। लेकिन जरा सोचिये तो कि आखिर विज्ञान कहते किसे हैं? वैज्ञानिक उन्नति के इतिहास में यंत्र विज्ञान का विकास आहार विज्ञान से प्रथम हुआ है। बहुत समय तक यान्त्रिकता ने विज्ञान के ऊपर एकछत्र राज किया, और उसके पराक्रमो को मानव मस्तिष्क की जीनका नाम दिया गया। बाद को विज्ञान की अन्य शाखायें बनी जैसे—आहार विज्ञान, शरीर विज्ञान, प्राणि विज्ञान इत्यादि, जिन्होंने यंत्र विज्ञान के कई एक पराक्रमों को मनुष्य सुख के घातक ठहराया। यंत्र विज्ञान ने चावल पालिश करने की मिल खड़ी कर दी, परन्तु आहार विज्ञान बताता है कि यह हानिकारक साबित होती है। इसी प्रकार अनेक दृष्टान्त दिये जा सकते हैं। परन्तु यहां तो हम केवल तेल को ही लेते हैं। तेल मिल सचमुच यान्त्रिक ज्ञान की जबरदस्त उत्पत्ति है परन्तु इससे बनी चीज तेल-पोषक तत्वमें कम ठहरता है। और अपने दुर्गुणों को छिपाने के लिये इसे तेल साफ करने की दूसरी बड़ी मिल खड़ी करनी पड़ी। मगर जो पदार्थ बना वह ताजे घानीके तेलका मुकाबला ही नहीं कर पाया। अब बताइये आप कौन से विज्ञान को मानेंगे? यन्त्र विज्ञान को या आहार विज्ञान को? अगर हम आहार विज्ञान को अधिक मूल्य देते हैं तो क्या यह कहना ठीक है कि हम विज्ञान की उन्नति में बाधक होते हैं? सिर्फ इस वास्ते कि यन्त्र विज्ञान द्वारा कुछ कलें बना दी गई हैं क्या हमें उनका उपयोग आवश्यक ही है, चाहे उनसे हमें नुकसान ही क्यों न होता हो? और क्या तभी हम वैज्ञानिक मनोभूमिकावाले कहला सकेंगे। जरा ठहरकर सोचिये तो, नीरक्षीरविवेक बुद्धि से काम लीजिये।

---

८. सामान्य

१ तेल को सड़ने से कैसे बचाना

तिलहन में जो पानी मिलाया जाता है वह तेल के साथ न मिलकर खली में रहता है। यदि तेल में खली का चूरा रह जाता है तो उस चूरे के साथ साथ पानी का भी कुछ अंश तेल में आ जाता है। यह पानी तथा खली के चूरे से तेल कुछ समय के बाद सड़ने लगता है। यदि तिलहन अच्छे पूरे साफ न किये तथा नमी लगे हुए हों तो भी तेल सड़ता है।

ताजे निकले घानी के तेल में नीचे लिखी बाहरी चीजें मौजूद होती हैं

१ नमी (पानी)
२ गाद
३ मैल जैसे खली के टुकड़े आदि
४ एन्जीमैटिक पदार्थ
५ चर्बी की खटास
६ रंगदार पदार्थ
७ सुगंध

६ और ७ नम्बर की चीजें जहां तक तेल की खाद्यता या संबंध है, बुरी नहीं हैं। नारियल की सी सुगंध ही (जोकि खास तौर से घानी के तेल में ही पाई जाती है) शायद एक चीज है जो घानी के तेल को मिल के तेल से अच्छा बनाती है।

१ से लेकर ५ नम्बर तक की चीजों से तेल को सुरक्षित रखने या सुरक्षित रखने के उसके गुणों में बड़ी गड़बड़ी पैदा होती है।

बिना साफ़ किए घानी के तेल के बारे में निम्न दो शिकायतें हमारे सामने हैं

(अ) तेल को अधिक दिन रखने से वह सड़ जाता है और उसमें ऐसी बदबू आने लगती है कि वह खाने के काम का नहीं रहता।

(आ) जब तेल बहुत गरम होता है और उसमें तलने के लिए कोई चीज डाली जाती है तो उसमें झाग बहुत उठते हैं।

स्पष्ट तौर से इन दोनों दोषों का इलाज यही है कि तेल में से नमी (पानी), खटास, गाद और एन्ज़ीमेटिक पदार्थों को तेल में नीचे जमाकर निकाल देना चाहिये। इनकी सफाई कर देने के बाद तेल छः महीने से अधिक तक रक्खा जा सकता है वह बिगड़ेगा नहीं।

तेल में जितनी खराबी आती है, उसका कारण यह है कि कच्चे माल में, जिसमें से कि तेल निकाला जाता है, सड़े या टूटे या खराब बीज आ जाते हैं। यदि इन बीजों को ध्यानपूर्वक साफ करा दिया जाय, तो तेल में जल्दी खराबी आने का खतरा शायद बहुत कम रह जायगा।

यह भी ध्यान रक्खा जाना चाहिए कि तेल साफ़ बर्तन में सफाई के साथ रक्खा जाय। उसमें हवा या नमी बिल्कुल नहीं पहुँचनी चाहिये।

तेल को खराब करनेवाली चीजों को दूर करने के लिए हमारी प्रयोग शाला में जो जाँच हुई, उससे जो परिणाम निकले, वे संक्षेप में नीचे दिये जाते हैं।

(१) तिल का तेल प्रयोगशाला में अच्छी तरह से छान लिया गया और हवा और नमी से सुरक्षित रक्खा गया। उसमें छः महीने के बाद भी दुर्गन्ध नहीं आई। लेकिन बेछना तेल एक सप्ताह के बाद ही खराब हो गया। और तीन सप्ताह बाद उसमें दुर्गन्ध आने लगी। यह छना तेल, जो कि हवा और नमी से सुरक्षित नहीं रक्खा गया, दो महीने तक ही अच्छा रह सका। तिल के तेल के बारे में जो कुछ कहा गया है, वह थोड़े बहुत उलट फेर के साथ दूसरे तेलों पर भी लागू होता है।

(२) वजन के अनुसार तेल में एक प्रतिशत तक पिसा नमक डालने से गाद नीचे बैठ जाती है और तेल को छः से नौ हफ्ते तक रक्खा जा सकता है। लेकिन यह ध्यान रक्खा जाना चाहिए कि तेल में नमक बाकी न रहे। लगभग २४ घंटे बाद उस नमक पर गाद जम जाने पर ऊपर का साफ़ तेल अलग कर लेना चाहिए।

(३) चर्बी की खटास को दूर करने के लिए तेल में ४ से ८ प्रतिशत क पोटाश वाली लकड़ी की राख मिलाई गई। सामान्यत इसमें पोटाश के ारा ५.० से ७ ५ प्रतिशत तक रहता है। इस प्रकार साफ किया गया ल छ सप्ताह से अधिक रक्खा जा सका। इस साफ करने की क्रिया में अच्छा हो यदि तेल को राख के विलेय से और खूब गरम करके साफ किया जाय) तेल को छाना या साफ किया गया, जिससे तेल का चिकना और जमा मैल दूर हो जाय। तिल के तेल में चूँकी अधिक खटास नहीं होती होती, इसलिए उसमें राख का अनुपात जो ऊपर बताया गया है, नहीं रहता है। लेकिन कुछ तेल ऐसे होते हैं जिनमें १० प्रतिशत तक खटास होती है। उनके लिए उसी अनुपात में खटास को दूर करने के लिए अधिक मात्रा में राख की आवश्यकता होती है।

(४) नमक और राख द्वारा तेल साफ करने के तरीकों को मिलाकर तेल साफ करने से बहुत अच्छा परिमाण निकला और तीन महीने से ऊपर तेल की ताजगी बनी रही।

(५) यह जाँच करने के लिए कि आया सफ़ाई की क्रिया में तेल को गरम करके डालने के प्रयोग से (जिससे कि तेल की मात्रा बढ़ जाय) तेल की खराबी पर कोई प्रभाव पड़ता है या नहीं, गरम तेल की जाँच की गई। उससे पता चला कि इस क्रिया से तेल के सुरक्षित रहने के गुण पर कोई बुरा असर नहीं पड़ता है।

(६) नमी को दूर करने के लिए अब तक हमने केवल प्लास्टरपेरिस इस्तेमाल किया है। दूसरे प्रकार की इनफ्यूसोरियल मिट्टियाँ अधिक उपयोगी नहीं पाई गई। यदि नमक और राख के प्रयोग नमी दूर करने के लिए अकेले किए जाते हैं, तो हमने देखा है कि तेल की दुर्गन्ध को दूर करने में वे अधिक सहायता नहीं देते।

(७) झाग आनेके बारे म हमने देखा है कि वे चीजें जो कि तेल में दुर्गन्ध लाती हैं, वही झाग भी लाती है। साफ़ किए तेल में झाग नहीं आती। हाँ, तलने के लिए अगर चीज को तेल के अच्छी तरह गरम होने से पहले ही डाल दिया जायगा, तब तो झाग उठेंगे ही।

२. घानी आम सफ़ाई

आम तौर पर घानियों के चलने की जगह के चारों तरफ़ बड़ी गंदगी रहती है, और हम भी इस गंदगी के आदी-से होगये हैं। पर हमें यह मनोदशा छोड़ कर गंदगी को बरदाश्त न कर सकने की आदत डालनी चाहिये। अगर ग्राहक सफ़ाइ पर ज़ोर दें, तो तेली लोगों को सफाई रखनी ही पड़ेगी। चूँकि तेल खाने की चीज़ है, इसलिये इसकी सफाई पर जोर देना और भी जरूरी है।

१ बैल के चलने से धूल उड़ती है और इसका कुछ हिस्सा कोठे में भी पहुँचता है। इसे दूर करने के लिये बैल के चलने के दायरे को क़रीब १½ फ़ीट गहरा रखना चाहिये और रोज पानी छिड़कना चाहिये। इस दायरे के गहरा होने से बैल को बोझा खींचने में भी आसानी हो जायगी।

२ तेल भरने वाले बरतन को धूल और पेशाब से बचाने के लिये एक लकड़ी के तख्ते से ढक देना चाहिये। यह ऐसा होना चाहिये, जो गड्ढे पर ठीक बैठता हो।

३ बैल चलते समय कभी ही पेशाब करता होगा, मगर चलकर रुकने के बाद तो जरूर करता है। इस समय उसे तेल के बरतन से दूर खड़ा करना चाहिये, ताकि तेल में पेशाब के छींटे न जा सकें।

४ आजकल तेली गोबर को उठाने के बाद बैल या घानी से हाथ पोंछकर ही तिलहन चलाने लगते हैं। इस तरह हाथ पूरी तरह साफ़ नहीं होने पाता। इस रिवाज को एकदम बंद करके गोबर को एक छोटे से खुरपे से उठाने का तरीक़ा काम लाना चाहिये।

५. तेली लोग काम करते करते तम्बाकू पीते रहते हैं और उन्हीं हाथों से तिलहन को चलाते रहते हैं। या तो काम करते करते तम्बाकू पीने के रिवाज को बंद करना चाहिये या पीने के बाद हाथ धो लेना चाहिये।

६ तेली के कपड़े जल्दी ही गंदे हो जाते हैं इसलि उसे दो जोड़े कपड़े रखने चाहिये जो अदल बदलकर रोज धोये जा सकें।

७ आम तौर पर पानी और तेल के बरतन बहुत ही गंदे होते हैं। उन्हें धूल से दूर रखना चाहिये और अक्सर धोते रहना चाहिये।

८. तिलहन में डाला जानेवाला पानी पीने के पानी की ही तरह साफ़ होना चाहिये।

९. तिलहन को अच्छी तरह साफ़ कर लेना चाहिये। बरसात में तिलहन में बहुत से कीड़े पैदा हो जाते हैं, इसलिये यथाशक्य पेरने से पहले तिलहन को धूप में रखकर साफ़ कर लेना चाहिये। बहुत सी जगहों में तो इसी वजह से बरसात में घानियाँ बंद रक्खी जाती हैं।

१० बैल को हर हफ्ते नहलाना चाहिये। इससे वह साफ़ रहेगा और उसकी थकावट भी कम हो जायगी। बैल की थकावट को दूर करने के लिये पानी में तैराना बहुत ही उत्तम है।

४ घानी के बैल की खुराक और देखभाल

चुनाव

घानी की आर्थिक व्यवस्था में घानी का बैल एक महत्त्वपूर्ण अंग है क्योंकि घानी चालने में सारी शक्ति बैल ही से प्राप्त होती है।

घानी को अच्छी तरह से चलाने के लिये हमें एक ऐसे प्राणी की जरूरत होती है, जो तेज चाल से गोल घेरे में घूमता रहे और भारी बोझा बराबर खींचता रहे। ये सब बातें उस प्राणी में हमें मिल जाती है, जो कद में मध्यम हो, शरीर उसका गठा हुआ हो और टाँगें लम्बी हों।

इन जुतनेवाले प्राणियों की जाच करने के दो तरीके हैं। पहले तो उसके शरीर से ही पता लग जाता है, दूसरे उसकी बाक़ायदा जाँच करके। अच्छे बैल में जो गुण होने चाहिए, वे नीचे दिये जाते हैं

जबड़े मजबूत और चौड़े होने चाहिए, होंठ पतले और मजबूत, नथने चौड़े और खुले, मुह चौड़ा, माथा बड़ा, आँखें बड़ी, चमकीली, लुभावनी और स्पष्ट, गर्दन लम्बी और सुगठित, कन्धे मजबूत, भारी और सुगठित, पैर मजबूत और सीधे, जोड़ जितने भारी हों और हड्डियाँ साफ, खुर न बहुत बड़े हों, न बहुत छोटे, अधिक खुले न हों। शक्ल म गोल, सीना चौड़ा होना चाहिए और पसलियाँ मजबूत और बड़ी, कूल्हे और पसलियों के बीच का भाग चौड़ा और पूँछ अच्छी और पतली, बैल पर अधिक चर्बी न हो, मोटा बैल नहीं लेना चाहिये, हड्डियाँ उसकी मजबूत, बड़ी और पूर्ण विकसित हों।

खुराक

घानी में जुतने वाले १००० पौण्ड वजनवाले बैल के लिये नीचे दिये नक्शे के अनुसार खुराक चाहिये

	सूखा पदार्थ (पौण्ड)	प्रोटीन (पौण्ड)	कार्बोहाइड्रेट पौण्ड	चर्बी (पौण्ड)	* पौष्टिकताका अनुपात (पौण्ड)
आराम में	१८	.७	८	१	१ ११ ८
भारी काम में	२८	२ ८	१३	८	१ ५ ३

साधारणतया ढोरों का चारा दो भागों में बाँटा जाता है

(१) चारा (२) दाना

चारे में साधारणतया सब तरह की घासें ज्वार और मक्के की कड़ब, गेहूँ और चावल के डंठल, सिलेज और भूसा ये सब आते हैं। खुश्क चारे के रूप में ये बहुत उपयोगी होते हैं। कच्चे रेशे के कारण भी उनकी उपयोगिता होती है। सब व्यवहारिक अर्थों में उचित यही है कि बैल जितना चारा खाना चाहे, उतना उसे खाने दिया जाय। १२ से २० पौण्ड तक खुश्क चारा दो तीन बार में दिया जाय, तो अच्छा होता है।

दाने को तीन मुख्य उप विभागों में बाँटा जा सकता है

(१) अनाज और उनसे तैयार की गई चीजें, जिनमें कार्बोहाइड्रेट अधिक हों, जैसे बाजरा ज्वार, मक्का, रागी, गेहूँ का चोकर, चावल का चोकर, इत्यादि।

(२) दालें और उनसे तैयार की गई चीजें जिनमें प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट अधिक हों, जैसे चना, अरहर, मुंग उडिद, सेम इत्यादि।

(३) तेल के बीज और खली जिनमें, प्रोटीन और चर्बी बहुत होती है जैसे बिनौले, खली—मूँगफली की खली, तिल की खली, करडी की खली, राई और सरसों की खली, अलसी की खली, नारियल की खली।

यह सब जानते हैं कि प्रोटीन एक दूसरे से बहुतसी बातों में भिन्न होते हैं और बैलों के शरीर पुष्ट करने के लिये बहुत सी क़िस्म के प्रोटीनों की आवश्यकता होती है। अतः आवश्यक है कि प्रोटीन पर्याप्त मात्रा ही में न हो, बल्कि भिन्न भिन्न प्रकार के गुणों वाले भी हों।

* प्रोटीन कार्बोहाइड्रेट+(चर्बी×२ २५)

घानी के बैल की खुराक में चारा खूब हो और ४–५ पौण्ड दाना हो, जिसमें २–३ भाग खली हो, एक भाग दाल, कोई एक अनाज और २ आस नमक। बिलकुल खली ही देना या अधिक खली खिलाना अंत में बैल के स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होता है।

खुराक की तैयारी

पाचन में सहायता देने के लिये चारे को कई प्रकार से तैयार करके बैलों को दिया जाता है। लम्बी घास और कडब की कुट्टी की जाती है। खली, चोकर और दली दाल को पानी में भिगोया जाता है और सख्त अनाज, जैसे ज्वार, को कभी-कभी उबाला भी जाता है।

निगरानी और व्यवस्था

बैल के पाचन को ठीक रखने के लिए बड़ी मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है। इसलिए आवश्यक है कि बैल को अधिक मात्रा में साफ पानी देना चाहिये। साधारणतया बैलों को मौसम के अनुसार प्रति दिन ३ से ५ बार पानी पिलाना आवश्यक है।

चूँकि बैल को तमाम दिन घर के भीतर काम करना पड़ता है, इसलिये आवश्यक है कि बैलों का बाड़ा खुश्क रहे और हवादार हो। उपयुक्त नाँद अगर बना दी जाय, तो उससे खुराक के खर्च में कमी हो जाती है।

बैल जुगाली करनेवाला जानवर है और जुगाली करने में उसे काफ़ी समय लगता है। इसलिये उसके काम की व्यवस्था इस प्रकार होनी चाहिए कि बैल को खाने के बाद कम से-कम एक घण्टे का समय अपने खाये हुए चारे को चबाने को मिल जाय। इसलिये काम के समय बैल को खली देना उचित नहीं है।

दिन भर के कठिन परिश्रम के बाद बैल को मसलने या कभी-कभी गरम पानी से नहलाने से वह स्वस्थ रहता है। तैरना भी उसके लिए लाभदायक है। मक्खियों, चिचड़ी और जोंक आदि के आक्रमण से पूर्णतया रक्षा होनी चाहिये। यदि बैल अस्वस्थ हो, तो उचित यह है कि एक पौंड तेल और एक मुट्ठी नमक देकर उसका पेट साफ करा देना चाहिए और

उसे पूरी तरह से आराम मिलना चाहिये। साथ ही जानवरों का इलाज करने वाले पास के किसी डॉक्टर से सलाह मशविरा करना चाहिए।

४ खली का आहार में स्थान

मूँगफली, तिली और शायद अलसी आदि चन्द किस्म की खलिया खाद्य पदार्थ के तौर पर जरूरी इस्तेमाल की जा सकती हैं। अन्य खलियों में कड़े रेषों का प्रमाण बहुत ज्यादह रहता है इसलिए उनका खाद्य पदार्थ के तौर पर उपयोग नहीं किया जा सकता।

हमारे भोजन की उपयुक्तता बढ़ाने की दृष्टि से खली उपयुक्त है। हमारे भोजन में प्रोटीन की कमी रहती है ऐसा कहा जाता है इसलिए यह कमी जिस मार्ग से हो पूरी करनी चाहिये। खली यह प्रोटीन मिलने का बहुत अच्छा साधन है, क्यों कि मूंगफली की खली में ४८.६°/₀, तिली की खली में ४१.३१°/₀ और अलसी की खली मे ३५.५०°/₀ प्रोटीन रहता है। उनमे चर्बी भी काफी प्रमाण में मौजूद रहती है इसलिये वे एक मुफीद खाद्य पदार्थ बन सकती हैं।

खलियों से जो प्रोटीन मिलता है उसकी किस्म भी अच्छी होती है। सर रॉबर्ट मॅकॅरिसन की राय में एक दल अनाजों से मिलने वाले प्रोटीन की बनिस्बत द्विदल अनाजों से मिलने वाले प्रोटीन अच्छे हैं और उनसे भी बढ़िया वे प्रोटीन हैं जो बीजों से प्राप्त होते हैं। खली याने ऐसे बीजों का तेल निकालने के बाद बचा हुआ अवशेष ही है। डॉ डी एल सहस्त्रबुद्धे के अनुसार मूंगफली की खली, दूध, सोयाबीन और चने से प्राप्त प्रोटीन का तुलनात्मक तख्ता इस प्रकार है

ॲमिनो ॲसिड्स्	मूँगफली की खली	दूध	सोयाबीन	चना
आर्जिनाईन	१३.२६	४.८४	५.१२	
हिस्टिडाईन	१.५८	२		
लिसाईन	४.६९	५		
सिस्टाईन	१.४७			
टायरोसीन	४.८०			
ट्रिप्टोफेन	०.९६			

डॉ० सहस्रबुद्धे यह भी कहते हैं कि मूंगफली की खली टायरोसीन और आर्जिनाईन में विशेष समृद्ध है यह एक मार्के की बात है। ये दो आवश्यक और महत्व के ऍमिनो ऍसिड हैं। दूध के प्रोटीन सपूर्ण माने जाते हैं और ऐसा मालूम होता है कि सोयाबीन के बनिस्बत मूंगफली की खली दूध से अधिक मिलती जुलती है।

लोग कभी कभी मूंगफली के दाने और तिली खाते हैं, पर उनमें चर्बी अत्यधिक होने से वे आसानी से हज्म नहीं होते इसलिये वे किसी बड़े प्रमाण में नहीं खाये जा सकते। खलिया उनकी तुलना में हजम होने में आसान हैं इसलिये वे आसानी से हमारे नित्य के भोजन का घटक बन सकती हैं। उनमें जो प्रोटीन और चर्बी का प्रमाण है उसकी दृष्टि से वे दालों की अपेक्षा बहुत सस्ते दामों में मिलती हैं और इसलिये गरीब आदमी भी उन्हें इस्तेमाल कर सकते हैं।

खली खाने की नये सिरे से हम सिफारिश करते हों सो भी नहीं। आन्ध्र देश में इसकी प्रथा है। वहाँ तिली को कपड़े में या टोकनी में रखकर पानी से भिगोकर रगड़ते हैं जिससे तिली का बाहरी छिलका तथा मैल निकल जाता है। इस प्रकार सफाई से तिली तैयार करने से जो खली बनती है वह दिखने में सफेद रहती है। तेलगू में उसे 'तेलग पिंडी' कहते हैं और वह सबै आम सालन के तौर पर खाई जाती है। अमरावती के पास हमें ऐसा एक देहात मिला जहाँ का तेली नियमपूर्वक लोगों को खली बेचता है और लोग उसे शाकभाजी के साथ पकाकर खाते हैं।

इस प्रकार यदि खली खाने के काम में लानी हो तो तिलहन में से रेत और धूल सपूर्ण रीति से साफ करने की समस्या खड़ी होती है। मूंगफली के दाने बड़े होते हैं इसलियें वे आसानी से साफ होते हैं, पर तिली और अलसी के दाने उसीके आकार की रेत से अलग करना मुश्किल होता है। इसलिये खूब पानी में उन्हें धोना चाहिये ताकि धूल धुलकर निकल जावेगी और रेत नीचे जम जावेगी। यदि खली की ताजगी और सफाई के बारे में सपूर्ण रीति से खात्री चाहिये हो तो तिलहन घर पर साफ कर अपने सामने पेरवा लेना सब से अच्छा है।

खली की कौनसी चीजें बनाना यह खानेवाले की रुचि के अनुसार तय किया जा सकता है। उसके अच्छे बिस्किट बनाये जा सकते हैं, कई किस्म की मिठाई बनाई जा सकती है, या उसे शाक और दाल के साथ पकाकर भी खाई जा सकती है।

५ खली का खाद

खली का खाद भी बढिया होता है। गोबर आदि के खाद की अपेक्षा इसमें जमीन को आसानी से मिल सकनेवाले खाद का अंश केन्द्रित रूपमें रहता है। खाद की किमत उसमें के नाइट्रोजन के अनुपात में गिनी जाती है।

* भिन्न भिन्न खली में का खादतत्त्व

क्रम	खलीका नाम	नाईट्रोजन प्रतिशत
१	मुगफली की खली	७ ६६
२	तिली की खली	६ ६०
३	करडी की खली	६ ३४
४	बिनौले (छिलके सहित) की खली	५.५६
५	राई, सरसों की खली	५ ५४
६	जगनी की खली	५.४५
७	अलसी की खली	५.३०
८	नीम की खली	५.०४
९	रेंडी की खली	४ ५०
१०	खोपरे की खली	३ ६७
११	बिनौले (बिना छिलके) की खली	३ ३८
१२	महुवे की खली	२ ७२

* डॉ डी एल सहस्रबुद्धे द्वारा विश्लेषित।

परिशिष्ट अ

सीमेंट घानी की ओखली बनाने का तरीका

घानी की ओखली के लिए पर्याप्त नापकी लकडी मिलाना मुश्किल हो तो वह सीमेंट क्रान्कीट की बनाई जा सकती है। बाकी के हिस्से लकडी की ओखली में बिठाये जाते है वसे ही रहते।

१ निम्न चीजें नीचे बताये मुताबिक तैयार कराईये।

- अ साचा
- ब पिंजरा
- क पाईप समेत कोठा
- ड समेटनी चक्र

(अ) साचा

१ २½ फुट लंबी ½ मोटी और एक सिरे से २" चौडी तथा दूसरे सिरेसे २½" चौडा ऐसी ३८ लकडी की पट्टियाँ तयार करिये।

२ १ सूता मोटी और १" चौडी लोहे को पट्टी के चार टुकडे लीजिये जिसमें दो टुकडे बराबार चार फुट लबे हो और दूसरे दो टुकडे बराबीन तीन फूट लबे हो। इन पट्टियों के सहारे लकडी की पट्टियों के दो ऐसे गोलार्ध तैयार कीजिये जिसका कि एक सिरेका अदरका व्यास २½ फुट हो और दूसरे सिरेका अदरका व्यास २ फुट हो।

३ इन दो गोलार्धों को लोहे की पट्टी पर नटबोलट से कसने से पूरा साचा बनता है। नटबोल्ट निकाल लेनेसे साचा खुल जाता है।

४ साचे की कोई भी एक पट्टी को नीचे से करीब ५" ऊपर तक काट दीजिये। ताकि उस छेद से पाईप बाहर आ सके।

२ निम्न औजारों और साधनों को इकठ्ठा कीजिये।

(१) ३ घमेले (२) १ पावडा (३) सब्बल (४) १ एक राज का फौचा (५) १ लेहुल ग्लास (६) ३ थैली सीमेन्ट (७) ७ थैल रेती (८) १२ थैली १" मोटी गिट्टी (९) २ पानी डालने टम्लर (१०) ३ खाली थैली (११) ३ तेल लगाये हुए थैले के टुकडे जो कोठे की फाचरों के बीच मे रखे जाते हैं। (१२) डका (१३) करीब ५० ईंट, चूना, १ फुट × ५ फुट की दो लादी (१४) ५ फुट × ५ फुट की चद्दर या लादी जिसके ऊपर सीमेंट कान्क्रीट तैयार किया जा सके।

३ जमीन का गड्ढा

ओखली तैयार करने के स्थान मे ३ फुट गहरा और २ फुट व्यास का एक गड्ढा खोदिये। उसमे एक फुट तक टोल भर कर धुम्मस से पाया मजबूत कीजिये।

४ पहले दरजे का कान्क्रीट

सीमेन्ट, रेती और गिट्टी १ ३ ५ के अनुपात में मिलाकर पहले दरजे का कान्क्रीट तैयार कीजिये। जमीन के गड्ढे के बीच में पिजरा रखिये और पिंजरे के अन्दर और बाहर यह कान्क्रीट सब्बल से ठोंक ठोंक कर जमीन के तल तक भरिये।

सूचना —कान्क्रीट भरते समय पिंजरा एक बाजु झुक न जाय इसकी सावधानी रखिय।

५ दूसरे दरजे का कान्क्रीट

सीमेन्ट, रेती और गिट्टी १ २ ३ के अनुपात में मिलाकर दूसरे दरजे का कान्क्रीट तैयार कीजिये।

सूचना —कान्क्रीट लोहे की चद्दर या लादी पर ही तैयार करना चाहिए ताकि उसमें मिट्टी या दूसरा कचरा न मिल जाय। रेती और गिट्टी को काफी पानी में खूब धोकर साफ करना चाहिए ताकि उसमें कुछ धूल आदि न रह जाय।

६ साचा रखना

अब पिंजरे के बाहर साचे के दो गोलार्धों को नट बोल्ट से कसिये और उसका मध्य बिन्दु पिंजरा के मध्य बिन्दु से बराबर मिलाइये। साचे को ठीक सीधा

रखिये। साचा और पिंजरे के बीच में तथा पिंजरे के अन्दर ज़मीन से आठ इंच ऊपर तक दूसरे दरजे का कॉन्क्रीट भरिये।

७ कोठा रखना

अब पिंजरे के अन्दर कॉन्क्रीट पर पाईप समेत और कॉर्नरों के बीच में रखे हुए तेल वाले थैले के टुकड़े समेत कोठा रखिये। पाईप की बगल में डब्बे की रस्सी भराने के लिये करीब पांच इंच लंबा एक खीला रख देना।

इस बात का खास सावधानी रखिये कि कोठा ठीक मध्य में और ठीक सीधा हो। लेहन ग्लास से इसको परीक्षा कर लीजिये। कोठे के बाहर उसकी ऊपरी सतह से १" नीचे तक कॉन्क्रीट भरिये। इस समय पाइप और कोठा अपने स्थान में रहे इसकी सावधानी रखिये। १ : २ के अनुपात में सीमेन्ट और बारीक रेती लेकर पानी से लाही बनाइये और इस लाही से कोठे की आसपास की जगह चिकनी करिये।

८ समेटनी चक्र रखना

पिंजरे के अन्दर समेटनी चक्र इस तरह रखिये कि उसका साचा कोठे की ऊपरी सतह से बराबर मिल जाय।

साचे के अन्दर समेटनी चक्र की ऊंचाई के बराबर कॉन्क्रीट भरिये। साचे की दीवाल के साथ साथ २" चौड़ी और १½" ऊंची एक दीवाल बनाइये। इस दीवाल से समेटनी चक्र तक एक इंच का ढाल बनाइये।

९ साचा हटाना

साचे के अन्दर कॉन्क्रीट को २४ घन्टे तक सख्त होने दीजिये। उसके बाद साचे को हटा लीजिये। कॉन्क्रीट की असमान सतह को १ भाग सीमेंट और २ भाग बारीक रेती की लाही से समान कर दीजिए और उसे चार पांच घण्टे तक सूखने दीजिये और ऊपर खाली पोते रख दीजिये।

गीले पोते से ढाक कर ओखली को तीन सप्ताह तक सख्त होने दीजिये। पोते हमेशा गीले रखने चाहिये

१० तेल के बर्तन का गड्ढा

पाइप के नीचे बर्तन रखने के लिए पर्याप्त और डब्बा बाहर निकल सके

उतना लम्बा ६" ऊची दीवाल का ईंट और चूने का एक गड्ढा तैयार कीजिये। गड्ढे मे जमीन पर या तो लादी रखिये या ईंट।

११ मिट्टी का चबूतरा

ओखली के आसपास ६" ऊचा और २ फुट चौड़ा एक चबूतरा बनाइये। उसकी परिधि पर बास या लकड़ी की खूटियाँ लगाने से चबूतरा मजबूत बनेगा।

परिशिष्ट आ

घानी का अंदाज पत्र

वर्धा में एक तेली एक समय में दो घानी चला सकता है, इस आधार पर एक महीने में वह तिली (लाल) कितनी पेर सकेगी, उसके लिये कितनी पूँजी लगेगी, आदि बातों का मासिक अन्दाज नीचे दिया हुआ है। तेल की क़ीमत पेचघर के तेल की फुटकर बिक्री की दर पर और खली की क़ीमत पेचघर की खली की थोक बिक्री की दर पर कूती गयी है। इसी प्रकार दूसरे प्रकरण में मगनवाडी घानी की कार्यक्षमता के नीचे दिये गये तख्ते की मदद से अन्य तिलहन के लिये भी स्थानिक भाव खयाल में रखकर अंदाजपत्र बनाया जा सकता है।

लगनेवाली पूंजी

	रु०	आ०	पा०
(क) बैल तथा अन्य सामान के लिये			
दो घानी	२००	०	०
दो बैल	४००	०	०
अन्य सामान	१५०	०	०
	७५०	०	०
(ख) तिलहन एक साल के लिये	१२०००	०	०

(ग) जगह का क्षेत्रफल

दो घानी के लिये	३६' × १६' × १०'
तिलहन रखने के लिये	२०' × १६' × १०'
तेल और खली रखने के लिये	१०' × १६' × १०'
दूकान के लिये	१०' × १६' × १०'
बैलों के लिये (लगभग)	२०' × १०' × १०'

सूचना हर महीने के काम के दिन २५ माने गये हैं। हररोज

काम के घटे ८ रहेंगे, दोनों घानियों में मिलाकर कुछ १० घान प्रतिदिन निकलेंगे, ऐसा माना गया है।

आमदनी		खर्च	
४४% के हिसाब से हर महीने १९६० पौंड तेल होगा। इसमें २५ पौंड नुकसान हो जायगा, ऐसा माना है प्रति पौंड के ११ आने के हिसाब से	रु आ पा	हर महीने में १२६ खडी (३६६ पौंड) तिल लगेंगे। उनके ८८—०—० खडी के हिसाब से (हरएक खडी में कूडा कचरा आदि के ६ पौंड घट जाने की गुंजाईश रखकर)	रु आ, पा ११६२—८—०
कुल दाम	१३४७—८—०	तिल साफ कराने की मजदूरी ०—८—० खडी के हिसाब से	६—४—०
		सहायक का वेतन	३०—०—०
		दो बैलों की खुराक	६०—०—०
कुल खली २५२० पौंड		सामान दुरुस्ती, छीजन	१०—०—०
१ मन (८० पौंड)		मकान किराया	१५—०—०
के ३—२—० के हिसाबसे	९७—१०—६	६% के हिसाब से पूँजी का ब्याज	५०—०—०
		अन्य खर्च	५—०—०
			१३३८—१२—०
		पक्का मुनाफा	१०६—६—६
	१४४५—२—६		१४४५—२—६

सूचना हर महीने की बिक्री [illegible] वापस की जा सकेगी, इसलिये ब्याज की रकम, बाद [illegible] कम होती जायगी। ऊपर जो ब्याज दिखाया गया है [illegible] औसत है। सम्भव है कि मौसम के दिनों में [illegible] ६% ब्याज पर रकम न मिले। ऐसी हालत में

भाव से तिलहन खरीदना पड़ेगा। तिलहन का मौसम क़रीब २ महीने
होता है। साल के अन्य दिनों में तिलहन का भाव खंडी पीछे क़रीब ७
बढ़ जाता है, अर्थात् तिली की क़ीमत ६०) से बढ़ जायगी और पूरे सा
की, औसत निकाली जाय, तो वह ८०) से बढ़ेगी। इसमें से बचनेवा
ब्याज के ५०) घटा देने से मुनाफ़े में से औसत ३०) कम हो जायँगे

परिशिष्ट इ

२४ घंटे में २०० मन सरसों पेरनेवाली पावरसे चलनेवाली रोटरी घाने तथा एक्सपेलर्स वाली मिलकी योजना। (युद्ध पूर्व भावों के आधार पर)

यंत्र तथा अन्य सामान

१	कानपूर वर्क्स में बने बंगाल पद्धति के पावर से चलने वाले ३० घानों का प्रतिघान रु १२०/ के हिसाब से।	३० ३६००)
२	कानपूर वर्क्स में बनी रोटरी पद्धति की तिलहन सफाई की मशीन	५००
३	एक्सपेलर एक–किसी भी प्रसिद्ध कंपनी का स्टैंडर्ड टाईप का।	६०००
४	खली तोडने का यंत्र–डिसइंटीग्रेटर नं० १½	३५०
५	फिल्टर प्रेस २'×२'–१२ प्लेट्स् के साथ	१२००
६	तेल की टंकी–१००० मन के मिकदार वाली टोंटी आदि सहित	१३५०
७	तराजू दो–२० मन तक वजन करनेवाले	५००
८	भाफ, बिजली या गैस से चलने वाला ७० अश्वशक्ति का एंजिन। बिजली और गैस से चलनेवाले एंजिनों के साथ एक छोटा बायलर जरूरी है	१४०००
९	पट्टे, पुली, खंभे शॅफ्टिंग आदि	१०००
१०	इमारत तथा अन्य फुटकर अनाहूत खर्च	१०००
		३०,०००

चालू खर्च

नौकर		
१. एक रसायनशास्त्री	६०	
२ एक हेडमिस्त्री	१००	
३ एक, स्टोर क्लर्क	७५	
४ दो मेकेनिक दर रु ३० के हिसाब से	४०	
५. छह लाइनमेन, दर रु २० ,,	६०	
६ कूली ८, दर रु १२ के ,,	१२०	
७ फुटकर खर्च	९६	
	६	
		५००
कोयला और स्टोर		
१ कोयला या उसकी ऐवज में लगनेवाला तेल या बिजली		८००
२ फुटकर स्टोर सामान और मरम्मत (मासिक)		२५०
ब्याज तथा घसारा		
रु १०,००० पर ब्याज ६०/० और घसारा ७% के हिसाब से प्रतिमाह पड़नेवाली रकम		३४०
कुल मिजान		१८९०
या करीब		१९००

इसमें जमीन और मकान की कीमत नहीं ली गई है। यह लेने पर उसकी कीमत पर का ब्याज और घसारा भी शुमार कर लेना चाहिये।

पैदावार

मिल में प्रतिदिन २०० मन तिलहन पेरी जावेगी। एक महीने में २५ दिन काम होगा इस हिसाब से कुल ५,००० मन तिलहन पेरी जा सकेगी। तेल का प्रतिशत यदि ३५ माना जाय तो कुल तेल १७५० मन होगा। इसलिए एक मन तेल का पेराई करीब रु १-२ ० हुई

कमाई

तेल के व्यवसाय की आमदनी के दो विभाग होते हैं

रहती थी, खुली रहती थी, उसकी ज्वलन क्रिया पूर्ण नहीं होती थी इसलिये धुआँ काफी होता था और उसे कम अधिक करना सभंव नहीं था।

यदि लालटेनों में वनस्पतिजन्य तेलों का ही उपयोग करना हो तो उनमें तेल की टंकियाँ लालटेन के सिर पर रखनी चाहिए ताकि गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत के अनुसार तेल स्वयम् नीचे उतर कर बत्ती तक पहुँचता रहे या फिर इन तेलों को रासायनिक तरीकों से काफी पतला कर देना चाहिये। इसमें का दूसरा मार्ग देहातियों की पहुँच के बाहर है। गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत पर चलना तय करने पर भी हमारे सामने कई सवाल आकर खड़े होते हैं। पहला सवाल है, बर्नर में से तेल चूने का, इसलिये हमको ऐसी कोई तरकीब करनी चाहिये ताकि उसकी सतह ज्योति के कुछ ही नीचे हमेशा एकसी बनी रहे। मगनदीप में यह बात हमने "नीरो के चश्म" के सिद्धांत का अमल कर बत्ती तेल की टंकी के बाहर रखकर साधी है। बर्नर में हवा का काफी आवागमन रहे ताकि ज्वलन-क्रिया पूर्ण हो, इसकी भी व्यवस्था अवश्य चाहिये। मिट्टी के तेल की लालटेन की बत्ती की बुनावट सख्त रहती है। वनस्पतिजन्य तेल ढीली बुनी बत्ती द्वारा अधिक तेजी से ऊपर उठ सकता है या नहीं इसके प्रयोग हमें करके देखने हैं। उपर्युक्त समस्याओं को हल करने में श्री सत्यन गत चार वर्षों से लगे हुए हैं।

इन लालटेनों की मांग पूरी करने योग्य टीन की चद्दरें तथा अन्य सामान हमें मयस्सर नहीं हो रहा है इसलिये मौजूदा मिट्टी के तेल की लालटेनों को ही मगनदीप के तरजानुसार वनस्पतिजन्य तेल जलाने लायक बना देने की नीति को अख्तियार करना पड़ा। इससे लोगों को नयी लालटेन की कीमत की बचत होगी। मौजूदा लालटेनों को नयी पद्धति के बनाने के प्रति लालटेन बारह आना मजदूरी और चार आने का माल मसाला इतना ही खर्च आवेगा। पर यह रूपांतर-करने का काम भी सारे देश के लिये एक जगह पर करना सभंव नहीं होगा। इस लिये हम यह जानकारी प्रसिद्ध करा रहे हैं, और हमें आशा है कि सेवावृत्ति वाले लोग इस से लाभ उठा कर स्थानिक कारीगरों को यह काम सिखाकर अपनी अपनी जगह की मौजूदा लालटेनों को रूपांतरित करने में तथा टूटी फूटी और फेंक दी गयीं लालटेनें भी जोड़-जोड़ कर काम में लाने में सहायक होंगे। जो लोग इस काम को उठाना चाहें वे अ भा ग्रा उ संघ से मान्यता प्राप्त करलें। यदि उन्हें रूपान्तरित लालटेन और मगनदीप के हिस्से

चाहिये हो तो उनको चाहिये कि वे उनकी कीमत, पैकिंग आदि के दाम मंत्री, अ भा ग्रा उ संघ, मगनवाडी, वर्धा को पेशगी भेज दें। इनकी मौजूदा कीमतें इस प्रकार हैं

रूपांतरित मगनदीप (संपूर्ण)	रु ४-०-०
मगनदीप के छुटे भाग	रु २-४-०
दिवालगिरी	रु १-४-०

पुरानी लालटेनों में कौन से हेर फेर करने से नई किस्म की लालटेन बन जाती है इसकी तफसील मगनदीप नामक किताब में दी गई है। यह किताब ग्रा उ संघ, वर्धा से प्राप्य है।

२ मगनदीप का अर्थशास्त्र

मिट्टी का तेल भूगर्भ में से निकला हुआ खनिज तेल है। इसे मनुष्य निर्माण नहीं करता पर केवल कुदरती भण्डार में से बाहर निकलता है। इस लिये उसका अर्थशास्त्र याने लूट का अर्थशास्त्र है। उसका व्यापार खानगी व्यक्तियों के हाथ में होने से उसके भाव बुरी स्पर्धा, विनाशक और शक्तिशाली गुट या सट्टेबाजों द्वारा तय किये जाते हैं। हिन्दुस्तान में हरसाल करीब २० करोड़ रुपये का ६० करोड़ सेर मिट्टी का तेल खपता है। उसके बूते पर लोगों को शायद ही कोई रोजगार मिलता हो पर यह लोगों की आमदनी में से २० करोड़ रुपया तो खींच ही ले जाता है। गरीब से गरीब और सुदूर देहातों के लोग भी इसकी चुंगल से नहीं बच पाते। यह किस्सा यहां खत्म होता हो सो बात नहीं। यह तेल जलाने के लिये हमें लालटेनें खरीदनी पड़ती हैं जो करीब सभी विदेशी होती हैं और उनमें भी हमारे करीब उतने ही रुपये बाहर चले जाते हैं। तेल के माफिक इन लालटेनों के कारण भी लोगों को कोई रोजगार नहीं मिलता। जब कोई देशी चीज इस्तेमाल की जाती है तो उसका निर्माण और वितरण दोनों साथ साथ चलते हैं। पर जब कोई विदेशी वस्तु इस्तेमाल की जाती है तब तो वह सम्पत्ति बाहर जाने की ही कारणीभूत होती है। एक ही स्थान के समाज के एक स्तर के लोगों ने उत्पादन करना और दूसरे स्तर ने उसका उपयोग करना ऐसी हालत में भी परिणाम करीब करीब

ऊपर जैसा ही होता है। इसलिये यदि समतास्थापन का कोई उल्टा प्रवाह जारी न रहा तो उपर्युक्त हालात में गरीबी अधिकाधिक बढ़ती ही जावेगी। इस अनाम से यदि हमको बचना हो तो हमें ऐसा रास्ता ढूंढना पड़ेगा जिससे लोग खुद की मूलभूत जरूरियातें स्वयम् पूरी करने लग जायें। रोशनी एक जरूरी चीज है और उसके लिये दूसरों के मुहताज रहना हमारे लिये अनुचित होगा।

सारी दुनिया में तिलहन पैदा करने वाला हिन्दुस्तान ही प्रमुख देश है। यहां से प्रतिवर्ष केवल अंडी, मूंगफली और अलसी ही १० लाख टन बाहर भेजी जाती है। इन तिलहनों का तेल रोशनी के काम बखूबी लाया जा सकता है, पर इन तेलों के अन्य उपयोग हो सकते हैं, इसलिये रोशनी के लिये वे शायद महंगे मालूम होंगे। पर नीम, महुआ, करंजिया, रायन, अगर, पोलग, पाजू आदि का भी तेल निकलता है जो आज भी देहातों में रोशनी के काम लाया जाता है और जो व्यापारिक दृष्टि से भी मिट्टी के तेल से सस्ता पड़ सकता है। मनुष्य ये तेल प्रतिवर्ष निर्माण करता है और यदि हम इनका उपयोग करने लग जायें तो हम एक कायम का आर्थिक ढांचा बना लेंगे, जिससे लोगों को हमेशा के लिये व्यवसाय मिल जायगा, तिलहन का अटूट संग्रह होने से हमारे ढांचे में कोई खलबली न मच सकेगी और उत्पादन और विभाजन दोनों करने वाले लोग मालदार बन जावेंगे।

एक ही आकार प्रकार की बत्ती द्वारा उतने ही समय में मिट्टी के तेल की बनिस्बत वनस्पतिजन्य तेल २०% कम जलता है। इस हिसाब से मौजूदा मिट्टी के तेल की खपत की पूर्ति के लिये हमें ७२ करोड़ सेर वनस्पति जन्य तेल की जरूरत होगी। तिलहनों के अन्य उपयोग कायम रखकर यदि हम उनकी केवल निर्यात रोक दें तो उन्हें १,५०,००० घानियों में पेर कर हम ४५ करोड़ सेर तेल पा सकेंगे। ऐसा करने से १,५०,००० तेलियों को रोजगार देकर और उसके द्वारा उन्हें ४॥ करोड़ रुपयों की कमाई करा देने के अलावा हम ४ करोड़ रुपयों की खली मिलेगी, जिसके द्वारा हमारे जानवर पुष्ट होंगे और हमारी जमीन कसदार बन सकेगी। घानी के १,५०,००० बैलों को भी समुचित खुराक मिलेगी और पूरा काम मिलता रहेगा। इन से जो तेल निकलेगा वह करीब १७ करोड़ रुपयों का होगा। इस प्रकार निर्यात रोक कर यदि

तिलहन अपनी अपनी जगह पेरा जाय तो देश की सम्पत्ति रु० ४॥ करोड़ बढ़ेगी। शेष २७ करोड़ सेर तेल के लिये खाने के काम न आने वाले तेलों को इस्तेमाल कर सकेंगे। इसमें और १,००,००० घानियों, तेलियों और बैलों को काम मिल जायगा, और इन कामों में संलग्न कुटुम्बों को क़रीब ३ करोड़ रुपयों की आमदनी होने लगेगी।

इस प्रकार किसानों और तेलियों के फायदे के और जानवरों की खुराक और जमीन के लिये अच्छी खाद मिलने के अलावा मगनदीप के कारण कई टीन का खुदाई करने वालों को और काच के ग्लोब बनाने वालों को भी रोजगार मिल जायगा। इससे प्रतिवर्ष करीब २० करोड़ रुपया और मिल जाया करेगा, जमीन पर बोझस्वरूप बने हुए कई लोग इस ओर लग जाने से खेती पर का कुछ बोझ हलका हो जायेगा और लोगों की औसत आमदनी भी बढ़ जायगा। भिन्न व्यवसायों का तुल्यबल बनाने में इसका खासा असर होगा, कुशल कारीगर निर्माण होंगे और लोगों का मानसिक विकास होगा। शुद्ध भौतिक दृष्टि से भी मिट्टी के तेल की एवज में वनस्पतिजन्य तेलों के व्यवहार से लोगों को क़रीब रु० २७॥ करोड़ के व्यवसाय मिल जावेंगे।

राष्ट्रीय अर्थशास्त्र के अलावा मगनदीप इस्तेमाल करने वालों के व्यक्तिगत अर्थशास्त्र पर भी सरसरी नजर दौड़ाना अनुचित न होगा। सर्वप्रथम यहाँ यह बता देना ठीक होगा कि वनस्पतिजन्य तेल मिट्टी के तेल की अपेक्षा कम ज्वालाग्राही होते हैं इसलिये उनके उपयोग से आकस्मिक आग लगने की सम्भावना अत्यन्त कम रहेगी। फिलहाल उसी आकार के मिट्टी के तेल की लालटेन की बनिस्बत मगनदीप की रोशनी क़रीब १५% कम होती है, पर जैसा कि हम ऊपर लिख चुके है २०% तेल (वजन में) कम जलता है। लगातार [illegible] घण्टों में मगनदीप में ७॥ पाई का मूँगफली, महुआ, करञ्जिया या नीम का और ६ पाई का तिली, अलसी, या सरसों का तेल चाहिये जब कि उतने ही समय के लिये उसी आकार की लालटेन के लिये ७ पाई का मिट्टी का तेल चाहिये (इस हिसाब से मिट्टी के तेल के पीपे की कीमत रु० ३॥, खाने के तेलों की कीमत ६ आना सेर और खाने के काम में न आनेवाले तेलों की कीमत ५ आना सेर के हिसाब से मानी गई है)। यदि खाने के काम न आनेवाले

तेल इस्तेमाल किये जायँ तो दोनों का खर्च एकसा ही आता है। पर राष्ट्रीय अर्थशास्त्र की दृष्टि से मगनदीप इस्तेमाल करने में कितने बड़े फायदे हैं यह हमने ऊपर देख ही लिया है, इसलिये जिन को देश के हित का ख्याल है उनका फ़र्ज़ है कि वह अपने पड़ोसियों को मिट्टी के तेल के बजाय वनस्पतिजन्य तेल इस्तेमाल करने के लिये समझाने की भरसक कोशिश करें।

(उपरोक्त कीमतें युद्ध पूर्व के भावसे गिनी गई हैं।)

परिशिष्ट उ

उबाला हुआ तेल (बैल तेल)

चूंकि दुनिया के तमाम देशों में हिन्दुस्तान का, तिलहन की पैदावार की दृष्टि से, बड़े महत्व का स्थान है इसलिये यह बात स्पष्ट है कि उनसे बननेवाली और आसानी से बननेवाली चीजें बनाने के उद्योग भी इस देश के कारीगरों के लिये काफी उत्पादक साबित होंगी। इस दृष्टि से तेल पेराई को सबसे प्रथम स्थान मिलता है। देहाती उद्योगों का बुनियाद खेती होने से वहाँ चलने वाला धंधा कितना ही बड़ा क्यों न हो, खेती की हालत के साथ उसका भी विस्तार और संकोच होता रहता है। इसलिये यह जरूरी है कि जब इस प्रकार रोजगार मंदा पड़ जाता है, तब उस समय के लिये हम कोई सहयोगी धंधा ढूंढ़ें। यह बात मद्दे नजर रखकर बैल तेल और देशी चीजों से साबुन बनाने की रीति यहाँ दी गई है और इसलिये मगनवाड़ी में तेलघानी की जो शिक्षा दी जाती है, उसकी पूर्ति के रूप में ही यह खास उपयोगी होगी। स्वतंत्र रूप से जो लोग इस विषय का अभ्यास करना चाहें, उनके लिये यह बहुत उचित मालूम होगा।

अलसी का तेल रंग (Paint) बनाने में काफी इस्तेमाल किया जाता है। कुछ प्रकार के वार्निश, ताडपत्री, लिनोलियम और साबुन बनाने में भी यह थोड़े प्रमाण में इस्तेमाल किया जाता है। अलसी का तेल जल्द सूखने वाला तेल है, क्योंकि यह हवा में से प्राणवायु (ऑक्सीजन) जल्द सोख लेता है और उसकी एक कड़ी तह बन जाता है।

रंग और वार्निश बनाने के लिये ४ किस्म का अलसी का तेल व्यवहार में लाया जाता है।

१ ताजा पेरा हुआ, २ पुराना बना हुआ, ३ शुद्ध किया हुआ और ४ उबाला हुआ।

ताजा तेल बहुत आहिस्ते सूखता है, और उसकी झिल्ली निर्दो नहीं होती।

पुराना तेल ताजे तेल से अच्छा है, क्योंकि उसमें कोई भी कचरा तैरत हुआ रहने नहीं पाता, और वह एकदम साफ़ रहता है। ताजा पेरा हुआ तेल निर्गत डिब्बे में एक साल तक बंद रखने से साफ़ पुराना तेल हो जाता है बैल तेल बनाने के लिये यह सीधा काम में लाया जा सकता है।

यदि पुराना तेल न मिल सके, तो ताजा तेल गरम करके शुद्ध कर लेन चाहिये। इसके लिए तेल जल्दी से २६०° सेंटीग्रेड तक गरम किया जात है और फिर ठंडा होने दिया जाता है। उसे एक सप्ताह तक योंही रख दिय जाता है और उसमें,की सारी अशुद्ध चीजें नीचे जम जाने पर ऊपर का साफ तेल बैल-तेल बनाने के लिये लिया जाता है।

उपर्युक्त तीनों तेल कुछ आहिस्ता ही सूखते हैं। इसलिये कुछ रसाय निक शोषक द्रव्य डालकर तेल २००° सेंटीग्रेड तक गरम कर लिया जाता है और ६ से ८ घंटे तक उसी हालत में रखा जाता है। इस प्रकार से जो तेल बनता है, उसीको "उबाला हुआ" या बैल तेल कहते हैं। यह बहुत ही जल्द सूखता है।

शोषक द्रव्य बनाना

कोबॉल्ट, सीसा और मैंगेनीज के रोजिनेट्स ये प्रमुख शोषक द्रव्य हैं। इनके ऑक्साइड्स भी शोषक द्रव्यों के तौर पर इस्तेमाल किये जा सकते हैं, पर वे रोजिनेट्स जैसे गुणकारी नहीं होते। ऑक्साइड्स की अपेक्षा रोजि नेट्स तेल में ज्यादा फैल जाते हैं और तेल के सूखने की गति भी बढ़ाते हैं।

नीचे दिये हुए तरीके से राजन में कोबॉल्ट, सीसा और मैंगेनीज के ऑक्साइड्स मिलाने से रोजिनेट्स तैयार होते हैं। एनैमल या पीत में राजन डालकर वह आँच पर रख कर पिघलाया जाता है। पिघल जाता है, तब उसमें उपर्युक्त तीन 'ऑक्साइड्स' में नीचे दिये हुए प्रमाण में मिलाया जाता है और उसे राजन घोंटा जाता है। राजन और ऑक्साइड्स का जो मिश्रण

रोजिनेट करते हैं। हरएक ऑक्साइड् का स्वतन्त्र रूप से रोजिनेट बनाना चाहिये।

राजन और ऑक्साइड्स के प्रमाण ये हैं

राजन	कोबॉल्ट ऑक्साइड	लेडऑक्साइड या लिथार्ज	मैंगेनीज ऑक्साइड
१००	६	१८	७

तेल में रोजिनेट्स मिलाने का प्रमाण

तेल	कोबॉल्ट रोजिनेट	लेड रोजिनेट	मैंगेनीज रोजिनेट
१००	२	१	७

तेल उबालने की रीति

किसी भी बर्तन के प्रमाण का ३ से अधिक तेल उसमें न भरकर तेल उबाला जाता है। तेल को उबालते समय इस बर्तन का मुँह ढकना न चाहिये। १००° सेंटीग्रेड उष्णता होते तक उसे आँच दी जाती है, और बाद में रोजिनेट्स मिलाये जाते हैं और लकड़ी की डंडी से यह मिश्रण हिलाया जाता है। इस तरह करीब ७ घंटे तक २००° सेंटीग्रेड की उष्णता कायम रखनी पड़ती है। इसके बाद उसे कुछ ठंडा होने दिया जाता है और गरम रहते ही कपड़े द्वारा छानकर एक निर्वात डिब्बे में भर दिया जाता है। यही "उबाला हुआ" या "बैल" तेल है।

इसकी परख इस प्रकार होती है। लकड़ी के तख्ते पर इसका एक हाथ मारा जाता है और उसे सूखने में कितनी देर लगती है, यह देखा जाता है। यदि तेल निर्दोष हुआ, तो १२ से २४ घंटों में सूख जाता है। सूखने पर यह चमकना चाहिये और हाथ में चिपकना न चाहिये, अथवा उसपर से अँगुली खींचने से उसका निशान नहीं बनना चाहिये। ऊपर दिये हुए प्रमाण में शोषक द्रव्य मिलाने से और २००° सेंटीग्रेड तक उष्णता देने से बनानेवाले तेल का रंग हलका बादामी आता है। यह काफी प्रमाण रहता है और १२ घंटों के अंदर ही अच्छी तरह से सूख जाता है।

उष्णतामान कायम रखने की सावधानी रखना बहुत जरूरी है। इससे कम उष्णता दिखाने पर इसका रंग अच्छा आता है। और

ताजा तेल बहुत आहिस्ते सूखता है, और उसकी झिल्ली निर्दोष नहीं होती।

पुख्ता तेल ताजे तेल से अच्छा है, क्योंकि उसमें कोई भी कचरा तैरता हुआ रहने नहीं पाता, और वह एकदम साफ रहता है। ताजा पेरा हुआ तेल निर्वात डिब्बे में एक साल तक बंद रखने से साफ पुख्ता तेल हो जाता है। बैल तेल बनाने के लिये यह सीधा काम में लाया जा सकता है।

यदि पुख्ता तेल न मिल सके, तो ताजा तेल गरम करके शुद्ध कर लेना चाहिये। इसके लिए तेल जल्दी से २६०° सेंटीग्रेड तक गरम किया जाता है और फिर ठंडा होने दिया जाता है। उसे एक सप्ताह तक यों ही रख दिया जाता है और उसमें की सारी अशुद्ध चीजें नीचे जम जाने पर ऊपर का साफ तेल बैल-तेल बनाने के लिये लिया जाता है।

उपर्युक्त तीनों तेल कुछ आहिस्ता ही सूखते हैं। इसलिये कुछ रसायनिक शोषक द्रव्य डालकर तेल २००° सेंटीग्रेड तक गरम कर लिया जाता है और ६ से ८ घंटे तक उसी हालत में रखा जाता है। इस प्रकार से जो तेल बनता है, उसीको "उबाला हुआ" या बैल तेल कहते हैं। यह बहुत ही जल्द सूखता है।

शोषक द्रव्य बनाना

कोबॉल्ट, सीसा और मैंगेनीज के रोजिनेट्स ये प्रमुख शोषक द्रव्य हैं। इनके ऑक्साइड्स भी शोषक द्रव्यों के तौर पर इस्तेमाल किये जा सकते हैं, पर वे रोजिनेट्स जैसे गुणकारी नहीं होते। ऑक्साइड्स की अपेक्षा रोजिनेट्स तेल में ज्यादा फैल जाते हैं और तेल के सूखने की गति भी बढ़ाते हैं।

नीचे दिये हुए तरीके से राजन में कोबॉल्ट, सीसा और मैंगेनीज के ऑक्साइड्स मिलाने से रोजिनेट्स तैयार होते हैं। एनैमल या पीतल के बर्तन में राजन डालकर वह आँच पर रख कर पिघलाया जाता है। जब सब राजन पिघल जाता है, तब उसमें उपर्युक्त तीन 'ऑक्साइड्स' में से कोई भी एक नीचे दिये हुए प्रमाण में मिलाया जाता है और उसे राजन के साथ अच्छी तरह घोंटा जाता है। राजन और ऑक्साइड्स का जो मिश्रण तैयार होता है, उसे

रोजिनेट कहते हैं। हरएक ऑक्साइड् का स्वतन्त्र रूप से रोजिनेट बनाना चाहिये।

राजन और ऑक्साइड्स के प्रमाण ये हैं

राजन	कोबॉल्ट ऑक्साइड	लेडऑक्साइड या लियार्ज	मैंगेनीज ऑक्साइड
१००	६	१८	७

तेल में रोजिनेट्स मिलाने का प्रमाण*

तेल	कोबॉल्ट रोजिनेट	लेड रोजिनेट	मैंगेनीज रोजिनेट
१००	१	१	७

तेल उबालने की रीति

किसी भी बर्तन के प्रमाण का ¾ से अधिक तेल उसमें न भरकर तेल उबाला जाता है। तेल को उबालते समय इस बर्तन का मुँह ढकना न चाहिये। १००° सेंटीग्रेड उष्णता होते तक उसे आँच दी जाती है, और बाद में रोजिनेट्स मिलाये जाते हैं और लकड़ी की डंडी से वह मिश्रण हिलाया जाता है। इस तरह करीब ७ घंटे तक २००° सेंटीग्रेड की उष्णता क़ायम रखनी पड़ती है। इसके बाद उसे कुछ ठंडा होने दिया जाता है और गरम रहते ही कपड़े द्वारा छानकर एक निर्वात डिब्बे में भर दिया जाता है। यही "उबाला हुआ" या "बॉइल" तेल है।

इसकी परख इस प्रकार होती है। लकड़ी के तख्ते पर इसका एक हाथ मारा जाता है और उसे सूखने में कितनी देर लगती है, यह देखा जाता है। यदि तेल निर्दोष हुआ, तो १२ से २४ घंटों में सूख जाता है। सूखने पर वह चमकना चाहिये और हाथ में चिपकना नहीं चाहिये, अथवा उसपर से अँगुली खींचने से उसका निशान नहीं बनना चाहिये। ऊपर दिये हुए प्रमाण में शोषक द्रव्य मिलाने से और २००° सेंटीग्रेड तक उष्णता देने से बननेवाले तेल का रंग हलका बादामी आता है। वह काफी प्रवाही रहता है और १२ घंटों के अंदर ही अच्छी तरह से सूख जाता है।

उष्णतामान क़ायम रखने की सावधानी रखना बहुत जरूरी है। इससे कम उष्णता दिखाने पर इसका रंग अच्छा आता है। और

सूखता भी बहुत जल्दी है, पर काफ़ी लंबे अर्से तक वही उष्णता स्थिर रखनी पड़ती है, जो कि बहुत कष्टप्रद है। उष्णता २००° सेंटीग्रेड पर क़ायम रखने के लिये ३५०° सेंटीग्रेड वाले थर्मामीटर का बारम्बार उपयोग करते रहना आवश्यक है। १०° तक उष्णतामान कभी कम हो जाय, तो हर्ज नहीं, पर उसे २००° से अधिक कभी नहीं होने देना चाहिये। ३००° तक उष्णता पाने पर तेल आप ही आप जल उठता है, जिससे जान और माल दोनों को खतरा पहुँचना मुमकिन है। इसलिये ४००° तक उष्णता किसी भी हालत में नहीं बढ़ने देना चाहिये। इसके अलावा इतनी उष्णता पाने पर तेल में से तेज दुर्गंध छूटती है, जिससे जी घबरा जाता है। आम तौर से यह ध्यान रखना चाहिये कि तेल उबालने की जगह की दीवारें मिट्टी की और उनके ऊपर टीन छाया हो ताकि वह जगह आग से सम्पूर्णतया सुरक्षित रहे।

२ देशी चीजों से बना साबुन

यद्यपि देहातों में साबुन आम तौर से इस्तेमाल नहीं किया जाता, फिर भी शहरों के हरएक घर में तो यह रोजमर्रा इस्तेमाल करने की चीज हो गई है। फिलहाल या तो यह विदेशों से आता है, या यहीं पर तेल या चर्बी और कॉस्टिक सोडा द्वारा बड़े बड़े कारखानों में बनाया जाता है। देहातों में मिलने वाली चीजों से भी यह बनाया जा सकता है। वानस्पतिक तेल अपने यहाँ काफ़ी प्रमाण में होता है और मामूली सोडे में चूना मिलाकर कॉस्टिक बनाया जा सकता है। सज्जीमिट्टी, सज्जीखार और पापड़खार के रूप में अपने यहाँ मामूली सोडा बहुत मिल सकता है। इन सबमें सोडियम या पोटेशियम कार्बोनेट कम अधिक प्रमाण में मौजूद रहता है।

ऊसर जमीनों पर वर्षा ऋतु के बाद सज्जीमिट्टी की तह पाई जाती है। उसमें सामान्यतः ५ से २० प्रतिशत तक सोडा रहता है। पाज चक्र और चंद जगहों पर इसका प्रमाण ६० प्रतिशत भी पाया जाता है। कुछ वनस्पतियों की राख को सज्जीखार कहते हैं। इसमें १५ से २५ प्रतिशत तक सोडियम या पोटेशियम कार्बोनेट रहते हैं। यह अक्सर पंजाब और सिंध में होता है। नीची जगहों के तालाब तथा झीलें गर्मी में सूखने पर उनपर पापड़खार जमा

मिलता है। यह खार और सिंध में बहुतायत से पाया जाता है। इसमें सोडे का प्रमाण ४० से ६० प्रतिशत तक रहता है।

ऊपर दी हुई तीनों चीजों में चूना मिलाने से साबुन बनाने के लिये आवश्यक कॉस्टिक सोडा या पाटैशियम प्राप्त हो सकता है।

थोड़े पैमाने पर और सस्ता कपड़े धोने का साबुन बनाना हो, तो मामूली मिट्टी के तेल के खाली डिब्बे, करछुल और मामूली चूल्हे की सहायता से बनाया जा सकता है।

एरँडी, नारियल, मूंगफली, महुआ और तिली के तेल से साबुन आसानी से बन सकता है। एरंडी के तेल से साबुन बहुत जल्दी बनता है, पर वह अकेला अच्छा नहीं होता। अन्य चार तेलों का साबुन बनता तो ठीक है, पर उन्हें लंबे समय तक उबालना पड़ता है, तब उनका साबुन में रूपांतर होता है। इनमें से भी नारियल, तिली और मूंगफली के तेल के अन्य उपयोग होने से वे महँगे बिकते हैं, इसलिये साबुन बनाने के लिये पूरे नहीं पड़ते। केवल नारियल के तेल का साबुन बहुत जल्द घिस जाता है। ये तेल स्वतंत्र रूप से या किसी भी प्रमाण से मिलावट करके साबुन बनाने के काम आ सकते हैं।

भिन्न भिन्न स्थानों की सज्जीमिट्टी, सज्जीखार और पापड़खार के सोडे या पोटैश का प्रमाण भिन्न भिन्न रहता है, इसलिये इनमें से कॉस्टिक सोडा या पाटैश बनाने के लिये किस नमूने में कितना सोडा है, यह जान लेना जरूरी है। इसका आसान तरीका यह है।

सज्जीमिट्टी या उसमें का पानी घुलनेवाला रासायनिक घटक सोडा कारबोनेट एक क्षार है। किसी भी क्षार की तेजी जानने के लिये उसे किसी निर्धारित तेजाब से मारना पड़ता है और मामूली काम के लिये नीबू का रस एक सुलभ निर्धारित तेजाब है। क्षार का गुण नष्ट करने के लिये कितना तेजाब मिलाना पड़ेगा, यह जानने के लिये एक निदर्शक (Indicator) भी तय करना पड़ेगा। जासोन के फूल का रस एक सुलभ निदर्शक है।

(अ) एक नीबू का रस निकाल लीजिये। यह हमारा निर्धारित तेजाब हो गया।

(आ) एक बोतल में ½ तोला सज्जीमिट्टी लीजिये और उसमें २५ तोला खौलता हुआ पानी मिलाकर बोतल को ज़ोर से हिलाकर मिट्टी को खूब घोल लीजिये। इसे सज्जीमिट्टी का द्रावण कहेंगे।

(इ) चीनी मिट्टी के प्याले में एक औंस द्रावण ले लीजिये।

(ई) सफ़ेद स्याहीसोख पर जासौन का फूल मसलकर अच्छी तरह से रगड़िये ताकि स्याहीसोख पर फूल के रस का रंग चढ़ जाय। इस रस से स्याहीसोख का रंग बैंगनी हो जाता है। यह हमारा टेस्ट कागज़ है।

इस स्याहीसोख पर अब यदि आप द्रावण की एक बूंद डालेंगे, तो उसका रंग हरा हो जायगा। पर जब द्रावण का क्षारधर्म नींबू का रस मिलाते मिलाते नष्ट हो जायगा, तब उसकी बूँद से स्याहीसोख के रंग पर कोई असर नहीं पड़ेगा। पर इसके बाद भी अधिक नींबू का रस मिलाकर द्रावण यदि आम्ल बना दिया गया, तो उसकी बूँद से स्याहीसोख का रंग गुलाबी हो जायगा। मिनिम ग्लास में नींबू का रस लेकर सज्जीमिट्टी के द्रावण में एक एक बूँद मिलाते जाइये और द्रावण को लकड़ी से हिलाते रहिये। समय समय पर उस लकड़ी को निदर्शक पर छुआते जाइये। जबतक निदर्शक का रंग हरा होना बंद न हो जाय, तबतक नींबू का रस मिलाते जाइये। जब ऐसी हालत आ जाय, तब समझ लीजिये कि द्रावण का क्षारगुण नष्ट हो गया है। फिर भी निःसंशय होने के लिये और थोड़े बूँद नींबू का रस मिलाइये, ताकि द्रावण हिलाने की लकड़ी की बूँद के स्पर्श से निदर्शक कागज का रंग गुलाबी हो जाय। द्रावण का क्षारगुण नष्ट होने के लिये कितने मिनिम रस लगा, यह मिनिम ग्लास में से देख लेना चाहिये। अंत में जो अधिक रस मिलाया था, उसे शुमार नहीं करना चाहिये।

द्रावण का क्षारधर्म नष्ट करने के लिये जितने मिनिम लगेंगे, उससे ऐसा सिद्ध होगा कि उतना प्रतिशत सोडा कारबोनेट उस सज्जीमिट्टी में है, अर्थात् यदि ३० मिनिम लगे होंगे, तो ३० प्रतिशत सोडा कारबोनेट होगा। इसमें एक बात ख़याल में रखनी चाहिये कि मिनिम का मतलब एक बूँद नहीं होता, क्योंकि बूँद बड़ी रहती है और छोटी भी। इसलिये मिनिम जानने के लिये बाजार में मिलनेवाला मिनिम ग्लास ही काम में लाना चाहिये।

इस प्रकार सज्जीमिट्टी में सोडा कारबानेट का प्रमाण निश्चित हो जाने पर साबुन बनाने में उसका क्या प्रमाण होना चाहिये, यह तय करना आसान हो जाता है।

सोडा ३ भाग (या उतना सोडा मिल सकने लायक सज्जीमिट्टी), कली का चूना २ भाग और पानी ६ भाग इतने सामान से कॉस्टिक मिश्रण बनाया जाता है। पहले पानी में सज्जीमिट्टी डालकर उसे उबाला जाता है। जब वह खौलने लगता है, तब उसमें थोड़ा चूना मिलाया जाता है और उस के बाद करीब १ घंटे तक वह सारा मिश्रण उबलने दिया जाता है। इसके बाद वह उतार दिया जाता है, ताकि उसमें की मिट्टी नीचे जम जाय। फिर ऊपर का मिश्रण कपड़े से छान लिया जाता है और मिट्टी में फिर एक बार गर्म पानी मिलाकर मिश्रण छान लिया जाता है। इस प्रकार दोनों बार के छने हुए मिश्रण मिला दिये जाते हैं और साबुन बनाने के काम में लाये जाते हैं। यही कॉस्टिक मिश्रण है।

साबुन बनाने का आसान तरीका यह है।

आवश्यक सामग्री

६ पौंड तेल, ३ पौंड सोडा और २ पौंड कली के चूने से बना हुआ कॉस्टिक मिश्रण।

क्रिया

कॉस्टिक मिश्रण काफ़ी बड़े बर्तन में रखकर उबाला जाता है। फिर उसमें तेल (यह तिली, महुआ, एरंडी और मूँगफली के तेल का मिश्रण भी हो सकता है) धीरे धीरे छोड़ा जाता है और सारा मिश्रण कड़छी से या लकड़ी से हिलाते रहना पड़ता है। जब यह सारा पिंड ठंडा होने पर ठोस जमने की प्रवृत्ति धारण करे, तब उबालना और लकड़ी से हिलाना बन्द करना चाहिये। और उसे लकड़ी के या धातु के साँचों में उड़ेलना चाहिये। एक दो दिनों में साबुन साँचों में जम जाता है। यदि साँचे धातु के बने हों और साबुन उसकी बाजुओं में चिपक गया हो, तो बाजुओं पर तेज चाकू फेरकर उसे छुड़ा लेते हैं और साँचा उलट देते हैं जिससे साबुन के ढले नीचे गिर जाते हैं। फिर इन्हें इच्छित प्रमाण में काटकर रख लिया जाता है।

परिशिष्ट ऊ

तेलघानी सम्बन्धी प्रश्नावली

इस विषय के अधिक संशोधन के लिये इस समय बहुत ही कम जानकारी हासिल है। जानकारी किस ढंग की होनी चाहिये इसकी रूप-रेखा नीचे दिये हुए प्रश्नों पर से आसकती है। संपूर्ण विगतवार और विचार-पूर्वक जानकारी हासिल की जाय तो केवल अर्थशास्त्र के विद्यार्थियों को ही नहीं बल्कि राष्ट्रीय पुनर्निर्माण में दिलचस्पी लेनेवालों को भी वह उपयुक्त साबित होगी। इस दृष्टि से जो महाशय निम्न प्रश्नों में से सभी या कुछ के बारे में प्रत्यक्ष और विश्वसनीय जानकारी हासिल कर सकते हैं वे उस जानकारी को व्यवस्थापक, घानी विभाग, अ. भा. ग्रा. उ. संघ, वर्धा (मध्यप्रान्त) को भेजने की कृपा करें।

१ घानी की कार्यक्षमता

(१) प्रतिघान में कितने सेर तिलहन डाले जाते हैं?

(२) प्रतिघान को कितना समय लगता है?

(३) कितना प्रतिशत बिना गाद का शुद्ध तेल निकलता है?

(४) तेल और खली की प्रतिदिन की औसत मात्रा क्या है?

सूचना भिन्न भिन्न तिलहनों के लिये अलग २ जानकारी दीजिये।

(५) जुआ और बोझापाट के बीच की रस्सी में स्प्रिंग बॅलेन्स लगाने से कितने पौंड का खिचाव होता है?

(६) घानी में बनी हुई खली की मोटाई कितनी है?

(७) घानी का कांडा और लाट का रेखाचित्र नं० २ के अनुसार नापसहित नकशा दीजिये।

(८) लाट पर दबाव डालने के लिये बोझापाट पर कितना वजन रक्खा जाता है?

(६) तेल को नीचे से निकलने के लिये क्या मुहरी होती है या ऊपर से निकाला जाता है? यदि ऊपर से निकाला जाता है तो किस उपाय से?

२ घानी की लकड़ी

(१) प्रांतोंमें किस लकड़ी की घानिया बनाई जाती हैं?

(२) इनमें से कौन लकड़िया कम मिलती हैं और कौन बहुतायत में और वे कहाँ पायी जाती हैं?

(३) कौनसी लकड़ी सब से ज्यादा अच्छी है? किस किस्म की लकड़ी जल्दी फटती या घिसती है? कौनसी लकड़ियाँ तेल ज्यादा पीकर पोची पड़ती है और सड़ती है? किस लकड़ी में दीमक तथा अन्य कीड़े नहीं लगते?

(४) भिन्न भिन्न लकड़ियों की बनी हुई घानियों में से प्रत्येक औसतन कितने समय तक टिकती है? प्रत्येक लकड़ी के घानी की ओखली की औसत कीमत बताइये।

(५) घानी की लाट और कोठे की फाचर किन प्रकार की लकड़ियों से बनाई जाती है?

सूचना ऊपर के प्रश्नों में जो बातें पूछी गई हैं उनमे उक्त दोनों कामों की लकड़ियों के बारे में सही जानकारी दीजिये।

(६) लाट और ओखली की लम्बाई और चौड़ाई बताइये।

सूचना ओखली की लम्बाई निश्चित करने में जमीन का क्या भाग रहा है बतलाइये, क्योंकि जमीन में बालू का भाग अधिक होने पर तथा दरारें पड़ने का गुण होने पर ओखली की लकड़ी अधिक लम्बी रखनी पड़ती है।

(७) घानी के लिये आवश्यक कुछ लकड़ी का पूरा मूल्य बतलाइये।

३ घानी बनाने म मजदूरी की लागत

(१) घानी के मुख्य अंगों जैसे ओखली, कुंड, कोठा, लाट, बोझपाट इत्यादि के बनाने में [redacted] अलग क्या मजदूरी लगती है?

(२) एक सम्पूर्ण और नई घानी बनवाने में क्या मजदूरी लगती है ? इस में कारीगर को यदि खाना दिया जाता हो तो उस को भी सम्मिलित कर लेना चाहिये। मजदूरी रोज के हिसाब से दी जाती है या ठेके पर ?

(३) एक बढई को पूरी घानी बनाने में कितने दिन लगते हैं ? घानी के प्रधान अंगों के लिये अलग २ कितने दिन लगते हैं ?

(४) घानी के काम के विशेष बढई जिले में कितने हैं ? क्या उनकी संख्या इतनी पर्याप्त है कि वे मरम्मत के लिये समय पर मिल सकें ? क्या स्थानीय बढई घानी की मरम्मत का कुछ काम करते हैं ?

(५) घानी के लिये औसत वार्षिक मरम्मत खर्च क्या आता है ?

सूचना इसमें लकड़ी की घिसाई और बढई का खर्च इन दोनों का भी हिसाब करना होगा।

४ घानी का बैल

(१) स्थानीय बैल कमजोर होते हैं या मजबूत ?

(२) एक मिनिट में बैल घानी के आसपास औसतन कितने चक्कर लगाता है ?

(३) घानी एक बैल से चलाई जाती है या दो बैल से ?

साधारण बैल की कीमत क्या होती है ? वह घानी का काम कितने वर्ष कर सकता है ?

(५) बैल पर प्रतिदिन क्या खर्चा पड़ता है ?

(६) बोझापाट की लम्बाई कितनी है ? घानी में चलते समय बैल की रीढ़ बगल को कितनी झुकती है ? जुए को बोझा पाट से बाँधने वाली रस्सी क्या बैल के बगल से रगड़ खाती है ?

(७)बैल के अलावा और कौन जानवर घानी में जोते जाते हैं ? कीमत खुराकी खर्च और कार्यशक्ति के बारे में इनकी और बैलों की तुलना करो।

५ तेली की कार्यकुशलता

(१) एक घानी चलाने में कितने तेली की आवश्यकता पड़ती है ?

(२)तेली कितने प्रकार के तिलहनों को पेर सकता है ?

(३) भिन्न भिन्न तिलहनों के पेरने के उसके तरीके बतलाओ। वह कब और कितना पानी डालता है ? ठंडा या गर्म ? क्या बैल के चलते हुए रहने परभी खली खोदी जाती है ? यदि हाँ तो कितने बार ? यदि तेल मुहरी से निकाला जाता है तो मुहरी कब खोली जाती है ?

(४) तेली निम्नलिखित चीजों के बारे में क्या जानकारी रखता है, बतलाइये।

(अ) तेल के पिरने में गर्मी का महत्व।
घानी में जो अपने आप गर्मी उत्पन्न होती है उसके अलावा यदि गर्मी पैदा करने के कोई दूसरे साधन व्यवहार में लाये जाते हैं तो वे कौन से हैं ?

(ब) पेरते समय में खली के अभिसरण से समय का बचना।

(क) खली की मोटाई का लाट के दबाव तथा लाट और कोठे की दीवाल के बीच की जगह पर निर्भर होता है। खली की तुलनात्मक मोटाइ के आधार पर खली पर के दबाव का अन्दाजा लग सकता है। तेली इस विषय पर क्या प्रकाश डाल सकता है ?

(ड) भिन्न भिन्न तिलहनों के लिए भिन्न भिन्न ऋतुओं में पानी डालने की मात्रा।

(५) क्या तेली घानी मरम्मत के लिए बढ़ई को विस्तृत और आवश्यक पथप्रदर्शन कर सकने वाला होता है ? यदि घानी ठीक काम न देती हो तो क्या वह पता लगा सकता है कि कहाँ गड़बड़ है ?

(६) क्या तेली को बैल तेल या साबुन बनाने जैसा कोई सहायक पेशा आता है ?

<u>६ तिलहन</u>

(१) प्रान्त में किन तिलहनों की उपज होती है ? कितनी तादाद में ? उनमें से कितने बोये जाते हैं और कितने प्राकृतिक बनस्पति से इकट्ठे किये जाते हैं ?

(२) प्रत्येक तिलहन के पैदावार में से कितना उसी प्रदेश में पेरा जाता है और कितना बाहर भेज दिया जाता है ? क्या पेरने के लिए बाहर से कोई तिलहन आता है ? यदि हाँ तो कौन कौन से और कितने ?

(३) कौन कौन तिलहन बिना पेरे हुए व्यर्थ जाते हैं ? उनकी तादाद भी बतलाइये

(४) कौन से तिलहन खाने के काम में लाये जाते हैं और कौन दूसरे व्यवसाय के काम में आते हैं ? व्यवसाय में उनके क्या उपयोग होते हैं ?

(५) अपनी तेल की जरूरत के बारे में क्या प्रान्त स्वावलंबी है ? अथवा तेल का आयात बाहर से होता है ? यदि होता है तो कहाँ से और कितनी तादाद में ?

(६) भिन्न भिन्न स्थानीय तिलहनों का तेल प्रतिशत बतलाओ।

(७) प्रत्येक तिलहन की खली किस काम आती है ? क्या उसका निर्यात होता है ? यदि हाँ तो कहाँ भेजी जाती है और कितनी मात्रा में ?

७ बैल घानी, पावर घाना और मिलें

(१) *भिन्न भिन्न तिलहनों के लिए एक टन तेल की पेराई (पेरने की कीमत)* बतलाओ, यदि वह (१) बैल घानी में पेरा जाय, (२) पावर घाना में पेरा जाय, और (३) पावर मिल में पेरा जाय।

(२) भिन्न भिन्न तिलहनों का क्रमश, उक्त तीनों प्रकार की पेराई से निकलने वाले तेल प्रतिशत बतलाओ । तीनों प्रकार की पेराई में खली के अन्दर कितना प्रतिशत तेल रह जाता है ?

सूचना , निश्लेषण के लिए उपरोक्त प्रत्येक प्रकार की और प्रत्येक तिलहन की करीब पौन सेर खली अच्छी तरह टीन में रखकर व्यवस्थापक, घानी विभाग, अ भा ग्रा उ संघ, वर्धा, को भेजना चाहिये। पौन सेर खली में से काठे के सब से नीचे के हिस्से (पेट) में से एक पाव, बीच में से एक पाव और ऊपर के भाग में से एक पाव होनी चाहिये। और इन तीनों भागों की खली के नाम अलग अलग लिख कर भेजना चाहिए। साथ साथ इन तीनों भागों में बैठने वाली खली का प्रमाण भी बतला कर भेजी हुई खली उसका कौन सा भाग है बताना चाहिये ।

(३) उक्त तीनों प्रकार से निकले तेल और खलियों के बाजार भाव की तुलना करो।

(४) प्रान्त में कितनी बैल घानी, पावर घाना और पावर मिलें चलती हैं ? उनका तेल तथा खली का वार्षिक उत्पादन क्या है।

(५) प्रान्त की इस समय चलने वाली घानियों में कितने आदमियों अर्थात् तेली, बढ़ई, और मजदूर तथा बैलों को रोजी मिलती है ? पावर घाना में कितने आदमी काम करते हैं ? पावर मील में कितने ? पावर घाना और पावर मिल के मालिक के मुनाफे और कुल कर्मचारियों की तनख्वाह और मजूरी की रकम में क्या अनुपात है ?

(६) तेली के आय व्यय का ब्यौरा दीजिए। और उसमें शुरू का तिल-हन का संग्रह, नई खरीद, बैल आदि का खर्चा, घानी की घिसाई और मरम्मत का खर्च तथा तेल और खली की बिक्री और बचा हुआ तिलहन का हिसाब बतलाइये।

८ सामान्य

(१) बनावट तथा चलाने की पद्धति के अन्तर के अनुसार प्रान्त में कितने प्रकार की घानियाँ हैं ?

(२) क्या हाथ घानी भी कहीं इस्तैमाल में है ? उससे निकले हुए तेल प्रतिशत की बैल घानी के तेल प्रतिशत से तुलना करो।

(३) पेरने के स्थान की सफाई की दृष्टि से क्या क्या उपाय किये जाते हैं ?

(४) तेल में की गाद कैसे दूर की जाती है ? तेल कब तक बिगड़ता नहीं ? इसको टिकाने के लिए क्या उपाय काम में लाये जाते हैं ?

(५) गत दस वर्षों में बैल घानी की संख्या में कितनी कमी हुई है ? और क्यों ?

(६) क्या तेली अपने तिलहन पेरते हैं या पिराई पर ? यदि पिराई पर पेरते हैं तो एक घान के लिये क्या मिलता है ? पैसे मिलते हैं या खली रख लेते हैं ? कितना तेल निकाल देने का रिवाज है ?

(७) बैल घानी में सुधार करने के लिये तथा उसके पुनरुद्धार करने के लिये आप क्या उपाय बतला सकते हैं ?

८ बड़े पैमाने पर चलनेवाली तेल की मिलों की स्पर्धा के कारण बैलघानियों की सख्या घट गई है। इस स्पर्धा के होते हुए भी कई ऐसी बातें हैं जो इन घानियों के अबतक जिंदा रहने में मददगार हुई हैं नीचे लिखी ऐसी बातों में आपकी राय में कौन २ मददगार हुई हैं और घानियों के पुनर्जीवन में उनसे किस तरह फायदा उठाया जा सकता है ?

१ मिल के तेल से बढकर पौष्टिक और स्वादिष्ट होने के कारण लोग घानी तेल को पसद करते हों, २ कम से कम फायदे में अपना गुजर करने के लिये तेली तैयार हो, ३ मिल के तेल का अभी तक सभी जगहों पर गुजर न हो पाया हो, ५ लोग तिलहन का सग्रह करके जरूरत पडने पर मजदूरी पर तेल पेरवा लेते हों, ६ दूसरे फायदेमद धंधे का न होना और अपने धधे के प्रति प्रेम, ७ ज्यादा परिमाण में न मिलने के या और कई कारणों से मिल में कई तिलहन न पेरे जाते हों, पर वे स्थानीय उपयोग के लिये घानियों में पेरे जाते हों, ८ काश्तकारी या दूसरे मुख्य उद्योग की फ़ुरसत में सहायक धधे के तौर पर तेली तेलघानी चलाते हों, ६ लोग और तेलियों के सहकार से मिल के तेल का बहिष्कार किया गया हो।

६ नीचे लिखी बातों में कौन २ सी घानियों की सख्या घटाने में मददगार हुई हैं ?

१ घानी की कार्यक्षमता का अभाव याने तेल का प्रतिशत कम निकलना, कम तिलहन लगना, ज्यादह समय लगना, मरम्मत खर्च ज्यादह होना आदि २ शुद्ध घानी तेल न बेचने में तेलियों की अदूरदृष्टि, ३ फसल के समय में तेली के तिलहन सग्रह करने के लिये पूँजी का अभाव ४ जलाने के काम में वनस्पति तेल की जगह मिट्टी के तेल का उपयोग।

१० गाँव के कितने प्रतिशत लोग खुद तिलहन सग्रह करके मजदूरी पर तेल पेरवा लेते हैं ? यह तेल मिल के तेल से सस्ता पडता है या

महँगा ? क्या, तेली मजदूरी पर पेरे जानेवाले तिलहन से भी उतना ही तेल निकालता है जितना खुद के तिलहन में से निकालता है ?

११ फसल के समय में और दूसरे मौसमों में तिलहन के भाव में क्या फर्क रहता है ? इसका उस तेली पर क्या परिणाम होता है जो फसल के समय में न खरीद सकने की वजह से दूसरे मौसमों में बाजार भाव से तिलहन खरीदता है ? इस हालत को सुधारने के लिये आप क्या उपाय बताते हैं ?

१२ सालभर में कितने महीने और महीनेभर में कितने दिन तेली घानी चलाता है ? बाकी दिनों में क्यों नहीं चलाता ? रोजाना कितना तेल निकालता है और कितना बेचता है ? गाँव में खर्च होनेवाले तेल में से मिल तेल और घानी तेल का क्या प्रमाण है ?

१३ साधारणतया खाने के काम आने वाले तेल कौन २ से हैं उनमें कौन से घानी के हैं ? उनके भाव में क्या फर्क रहता है ? यह भाव साल में किस तरह बदलता है ?

१४ क्या घानी में मूँगफली पेरते हैं ? इसमें घानी मिल के तेल का मुकाबला कर सकती है ? दूसरे महँगे तेल की जगह इस तेल को हमेशा के लिये इस्तेमाल करने के लिये लोग तैयार हैं ?

१५ पूरा काम करने वाली एक घानी के तेल से गाँव के कितने कुनबों की माँग पूरी हो सकती है ?

अखिल भारत ग्राम उद्योग संघ

मगनवाडी, वर्धा (मध्यप्रांत)

प्राप्य पुस्तकों की मूल्य सूची

शर्तें

निम्न लिखित पुस्तकें हमारे यहा मिलती है। जो सज्जन किताब मगाना चाहें उन्हें चाहिये कि वे उनकी कीमत तथा डाक खर्चकी रकम टिकटोंके रूपमें या मनिआडर द्वारा पेशगी भेज दें। पुस्तकें अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी और गुजराती इन भाषाओंमें है। इसलिए आडर देते समय अंग्रजीके लिए (अ) हिन्दी के लिए (हिं) मराठीके लिये (म), और गुजरातीके लिये (गु), ऐसा लिख देना चाहिये। पता, डाकखाना, जिला, स्टेशन आदि साफ लिखें। रजिस्टर पोस्टसे किताब चाहिये हो तो तीन आना अधिक भेजें।

कोई भी बुकसेलर एक साथ कम से-कम रु० २५/- के हमारे प्रकाशन मगावें तो उन्हें १५°/₀ कमीशन दिया जावेगा। पेकिंग, रेल्वे खर्च तथा दीगर खर्च जिम्मे खरीददार। पुस्तकें मगाते समय रु० १०/- पेशगी भेजने चाहिये और शेष रकम व्ही पी द्वारा वसूल की जावेगी।

जिनके पीछे तारका चिह्न (*) है वे हमारे प्रकाशन नही हैं। इसलिये उनपर कोई कमीशन नही दिया जावेगा।

रास्तेकी किसीभी किस्मकी नुकसानीके हम जिम्मेवार न होंगे।

१ सामान्य

ग्राम आन्दोलनकी आवश्यकता—

ले जे सी कुमारप्पा [गाधीजीकी प्रस्तावना सहित]

गाधीजी कहते है—ग्राम आंदोलनकी आवश्यकता और व्यवहारिताके सबधमें जितने कुछ आक्षेप उठाये गये हैं उन सबका श्री जे सी कुमारप्पाने इस पुस्तकमें जवाब दिया है। ग्रामोसे प्रेम रखनेवाले हरएक व्यक्तिको इसे अपने पास चाहिये। शक्तिोंकी शकाए इसे पढ़ने पर निर्मूल हुए बिना
तो ऐसा लगता है कि नरादयका आंदोलन शुरू होनेके
आंदोलन की आवश्यकता प्रकाशित हुई है। यह
जवाब देनेकी कोशिश करती

अखिल भारत ग्राम उद्योग संघ

मगनवाड़ी, वर्धा (मध्यप्रांत)

प्राप्य पुस्तकों की मूल्य सूची

शर्तें

निम्न लिखित पुस्तकें हमारे यहां मिलती हैं। जो सज्जन किताब मंगाना चाहें उन्हें चाहिये कि वे उनकी कीमत तथा डाक खर्चकी रकम टिकटोंके रूपमें या मनिआर्डर द्वारा पेशगी भेज दें। पुस्तकें अंग्रेजी, हिंदी, मराठी और गुजराती इन भाषाओंमें हैं। इसलिए आर्डर देते समय अंग्रेजीके लिए (अ) हिन्दी के लिए (हिं) मराठीके लिए (म), और गुजरातीके लिये (गु), ऐसा लिख देना चाहिये। पता, डाकखाना, जिला, स्टेशन आदि साफ लिखें। रजिस्टर पोस्टसे किताब चाहियें हों तो तीन आना अधिक भेजें।

कोई भी बुकसेलर एक साथ कम-से-कम रु० २५/- के हमारे प्रकाशन मंगाये तो उन्हें १५°/॰ कमीशन दिया जायगा। पेकिंग, रेल्वे खर्च तथा दीगर खर्च जिम्मे खरीददार। पुस्तकें मंगाते समय रु० १०/- पेशगी भेजने चाहियें और शेष रकम व्ही पी द्वारा वसूल की जायगी।

जिनके पीछे तारेका चिह्न (*) है वे हमारे प्रकाशन नहीं हैं। इसलिये उनपर कोई कमीशन नहीं दिया जावेगा।

रास्तेकी किसीभी किस्मकी नुकसानीके हम जिम्मेवार न होंगे।

१ सामान्य

ग्राम आंदोलनकी आवश्यकता—

ले जे सी कुमारप्पा [गांधीजीकी प्रस्तावना सहित]

गांधीजी कहते हैं—ग्राम आंदोलनकी आवश्यकता और व्यवहारिकताके संबंधमें जितने कुछ आक्षेप उठाये गये हैं उन सबका श्री जे सी कुमारप्पाने इस पुस्तकमें जवाब दिया है। ग्रामोंसे प्रेम रखनेवाले हरएक व्यक्तिको इसे अपने पास रखना चाहिए। टीकाकारोंकी शंकाएं इसे पढ़ने पर निर्मूल हुए बिना नहीं रह सकतीं। मुझे तो ऐसा लगता है कि वर्तमान आंदोलन शुरू होनेके पूर्व ठीक आंदोलन की आवश्यकता प्रकाशित हुई है। यह किताब इस जवाब देनेकी कोशिश करती है।

अखिल भारत ग्राम उद्योग संघ

मगनवाडी, वर्धा (मध्यप्रांत)

प्राप्य पुस्तकों की मूल्य सूची

शर्तें

निम्न लिखित पुस्तकें हमारे यहां मिलती हैं। जो [illegible] चाहिए कि वे उनकी कीमत तथा डाक खर्चको [illegible] आर्डर द्वारा पेशगी भेज दें। पुस्तकें अंग्रेजी, हिंदी, [illegible] भाषाओंमें हैं। इसलिए आर्डर देते समय अंग्रेजीके लिए (अ) [illegible] मराठीके लिए (म), और गुजरातीके लिये (गु), [illegible] पताकाना, जिला, स्टेशन आदि साफ लिखें। [illegible] दाम आना अधिक भेजें।

कोई भी बुकसेलर एक साथ कमसे कम रु० [illegible] तो उन्हें १५% कमीशन दिया जावेगा। [illegible] खरीददार। पुस्तकें मंगाते समय रु० १०/ पेशगी [illegible] या द्वारा वसूल की जावेगी।

जिनके पास तारेका चिह्न (*) है वे हमारे प्रकाशन नहीं हैं। [illegible] कोई कमीशन नहीं दिया जावेगा।

ग्रामोद्योग पत्रिका [illegible] जिनको नुकसानके हक [illegible] हैं।

१ सामान्य

ग्राम आन्दोलनकी आवश्यकता—

जे० सी० कुमारप्पा [गांधीजीकी प्रस्तावना सहित]

[illegible] कहते हैं—ग्राम आन्दोलन [illegible] जिन कुछ बातोंपर उठाये गये हैं उन सबका [illegible] खड़ा किया है। ग्रामोंमें मन रखनेवाले प्रत्येक [illegible] [illegible]। कार्यकर्ताओंकी शंकाएं इस पहलू पर निर्भर [illegible] है, यह स्पष्ट है कि नरायनका आन्दोलन [illegible] का [illegible] की आवश्यकता प्रकाशित हुई है। [illegible] उसका औचित्य करती है।

गांधीजी लिखते हैं—दूसरे परिच्छेदमें जो सर्व साधारण
इसकी मौलिकता स्पष्ट होती है और वह यह भी बताती है कि यह रि
अमलमें आनी चाहिए, फाइलमें केवल पड़ी न रहने देनी चाहिए।
उद्योगोंके निस्बत व्यवहार्य सूचनाएं की हैं। जिज्ञासुओंको रिपोर्ट
पढ़नी चाहिये।

खण्ड १ भाग १ (पृष्ठ ५० (अ) ० ८ ०
६०६ देहातोंकी पैमाइशके बाद
सरकारको की हुई सर्व सामान्य सूचनाएँ

खण्ड १ भाग २ (पृष्ठ १३२) (अ) १ ० ०
चुने हुए दो जिलोंकी पैमाइश
और २४ ग्राम उद्योगोंपर टिप्पणियां

खण्ड २ भाग १ (पृष्ठ ४०) (अ) ० ० ०
जंगल, खनिज और यांत्रिक शक्ति उत्पादन
के साधनोंके निस्बत सूचनाएँ

खण्ड २ भाग २ (अ) ० १२ ० ०
खनिज उत्पत्ति, जंगलकी उत्पत्ति और
यांत्रिक शक्ति उत्पादन साधनोंके चुने
हुए भागोंका तथा बाजार, ढुलाईके
साधन और दर निश्चित आदिके संबंध
में चर्चा

+ वायव्य सरहद प्रांतके लिये एक आर्थिक योजना (पृष्ठ ३८)
ले जे सी कुमारप्पा (पूर्ति सहित) (अ) ० १२ ० ०

सर मिर्झा इस्माईल लिखते हैं—प्रांतकी औद्योगिक उन्नतिके
सवालोंपर चर्चा करना जरूरी था उसपर आपने बहुत ही साफ तौरसे चर
इसके लिये मैं आपका अभिनन्दन करता हूँ। आपने यह सवाल व्यावहारि
वास्तविक ढंग से कैसे हल हो सकता है यह बताया है।

.. तालुकाकी पैमाइश—ले जे सी कुमारप्पा
(अ) २ ० ० ०

काका साहब कालेलकर लिखते हैं—गुजरातके सच्चे प्रतिनिधिक त
आर्थिक हालतका अधिकृत बयान इसमें देखनेको मिलता है। पाठकोंके ख्या
ल आ जायगी कि उपर्युक्त कोष्टक बनाकर दिये गये अंक रिपोर्टके सारे वि